gosvaamii tulasiidaasa kRita vinayapatrikaa

गोस्वामी तुलसीदास कृत विनयपत्रिका

Document Information

Text title : Vinaypatrika

File name : Vinaypatrika_i.itx

Category : tulasIdAsa, raama, hindi

Location : doc_z_otherlang_hindi

Author : Goswami Tulasidas

Transliterated by : Mr. Balram J. Rathore, Ratlam, M.P., a retired railway driver

Description-comments : Converted from ISCII to ITRANS

Acknowledge-Permission: Dr. Vineet Chaitanya, vc@iiit.net

Latest update : August 28, 2021

Send corrections to : sanskrit@cheerful.com

This text is prepared by volunteers and is to be used for personal study and research. The file is not to be copied or reposted without permission, for promotion of any website or individuals or for commercial purpose.

Please help to maintain respect for volunteer spirit.

Please note that proofreading is done using Devanagari version and other language/scripts are generated using **sanscript**.

December 17, 2022

sanskritdocuments.org

गोस्वामी तुलसीदास कृत विनयपत्रिका

॥ राम ॥

विषयानुक्रमणिका

विषय	पदाङ्क	विषय	पदाङ्क
श्री गणेश-स्तुति	१	श्री राम स्तुति	४३-४५
सूर्य-स्तुति	२	श्रीराम-नाम-वन्दना	४६
शिव-स्तुति	३-१४	श्रीराम-आरती	४७-४८
देवी-स्तुति	१५-१६	हरिशङ्करी-पद	४९
गङ्गा-स्तुति	१७-२०	श्रीराम-स्तुति	५.५६
यमुना-स्तुति	२१	श्रीरंग-स्तुति	५७-५९
काशी-स्तुति	२२	श्रीनर-नारायण-स्तुति	६०
चित्रकूट-स्तुति	२३-२४	श्रीविन्दुमाधव-स्तुति	६१-६३
हनुमत्-स्तुति	२५-३६	श्रीरामवन्दना	६४
लक्ष्मण-स्तुति	३७-३८	श्रीराम-नाम-जप	६५-७०
भरत-स्तुति	३९	विनयावली	७१-२७९
शत्रुघ्न-स्तुति	४०	—	—
श्रीसीता-स्तुति	४१-४२	—	—

राग-सूचौ

आसावरी	६२,१८३-१८८	बिहाग	१०७-१३४
कल्याण	२०८-२११,२१४-२७९	भैरव	२२,६५-७३
कान्हरा	२४,२०४-२०७	भैरवी	१९८-२०३
केदारा	४१-४४,२१२-२१३	मलार	१६१
गौरी	३१,३६,४५,१८९-१९७	मारु	१५

जैतश्री ६३,८३-८४ रामकली ६-९,१६-२०,४६-६१,१०६
टोडी ७८-८२ ललित ७५-७७
दण्डक ३७ विभास ७४
धनाश्री ४-५,१.१२,२५-२९, सारंग ३०,१५५-१५७
३८-४०,८५-१०५ सूहो बिलावल १३५-१३६
नट १५८-१६० सोरठ १६२-१७८
बसन्त १३-१४,२३,६४ — —
बिलावल १-३,२१,३२-३५,१०७, — —
१३४,१३७-१५४,१७९-१८२ — —

॥ राम ॥
॥ श्री हनुमते नमः ॥

दो०

श्रीगुरु चरन सरोज रज, निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु, जो दायकु फल चारि ॥
बुद्धिहीन तनु जानिके, सुमिरौ पवन-कुमार।
बल बुद्धि विद्या देहु मोहि, हरहु कलेस बिकार ॥

चौपाई

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर। जय कपीस तिहुँ लोक उजागर ॥
राम दूत अतुलित बल धामा। अंजनि-पुत्र पवनसुत नामा ॥
महाबीर बिक्रम बजरंगी। कुमति निवार सुमति के संगी ॥
कंचन बरन बिराज सुबेसा। कानन कुंडल कुंचित केसा ॥
हाथ बज्र और ध्वजा बिराजै। काँधे मूँज जनेऊ साजै ॥
संकर सुवन केसरीनंदन। तेज प्रताप महा जग बंदन ॥
बिद्यावान गुनी अति चातुर। राम काज करिबे को आतुर ॥
प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया। राम लखन सीता मन बसिया ॥
सूक्ष्म रुप धरि सियहि दिखावा। बिकट रुप धरि लंक जरावा ॥
भीम रुप धरि असुर सँहारे। रामचन्द्र के काज सँवारे ॥

लाय संजीवन लखन जियाये। श्रीरघुबीर हरषि उर लाये ॥
रघुपति कीन्ही बहुत बडाई। तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई ॥
सहस बदन तुम्हरो जस गावैं। अस कहि श्रीपति कंठ लगावैं ॥
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा। नारद सारद सहित अहीसा ॥
जम कुबेर दिगपाल जहाँ ते। कबि कोबिद कहि सके कहाँ ते ॥
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा। राम मिलाय राज पद दीन्हा ॥
तुम्हरो मंत्र बिभीषण माना। लंकेश्वर भए सब जग जाना ॥
जुग सहस्र जोजन पर भानू। लील्यो ताहि मधुर फल जानू ॥
प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माही। जलधि लाँघि गये अचरज नाहीं ॥
दुर्गम काज जगत के जेते। सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते ॥
राम दुआरे तुम रखवारे। होत न आज्ञा बिनु पैसारे ॥
सब सुख लहै तुम्हारी सरना। तुम रच्छक काहु को डरना ॥
आपन तेज संहारो आपै। तीनो लोक हाँक ते काँपै ॥
भूत पिसाच निकट नहि आवै। महाबीर जब नाम सुनावै ॥
नासै रोग हरै सब पीरा। जपत निरंतर हनुमत बीरा ॥
संकट तें हनुमान छुडावैं। मन क्रम बचन ध्यान जो लावै ॥
सब पर राम तपस्वी राजा। तिन के काज सकल तुम साजा ॥
और मनोरथ जो कोई लावै। सोइ अमित जीवन फल पावै ॥
चारो जुग परताप तुम्हारा। है परसिद्ध जगत उजियारा ॥
साधु संत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे ॥
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता। अस बर दीन जानकी माता ॥
राम रसायन तुम्हरे पासा। सदा रहो रघुपति के दासा ॥
तुम्हरे भजन राम को पावै। जनम जनम के दुख बिसरावै ॥
अंत काल रघुबर पुर जाई। जहाँ जन्म हरि-भक्त कहाई ॥
और देवता चित्त न धरई। हनुमत सेइ सर्ब सुख करई ॥
संकट कटै मिटै सब पीरा। जो सुमिरै हनुमत बलबीरा ॥
जै जै जै हनुमान गोसाई। कृपा करहु गुरुदेव की नाई ॥
जो सत बार पाठ कर कोई। छूटहि बंदि महासुख होई ॥
जो यह पढै हनुमान चालीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा ॥
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा ॥

दो०

पवनतनय संकट हरन, मंगल मूरति रुप।
राम लखन सीता सहित, हृदय बसहु सुर भूप ॥

॥ इति ॥

सियावर रामचन्द्र की जय। पवनसुत हनुमान की जय ॥
उमापति महादेव की जय। बोलो भाइ सब संतन्ह की जय ॥

॥ श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥
विनय-पत्रिका
राग बिलावल
श्रीगणेश-स्तुति
१

गाइये गनपति जगबंदन। संकर-सुवन भवानी नंदन ॥ १ ॥

सिद्धि-सदन, गज बदन, बिनायक। कृपा-सिंधु,सुंदर सब-लायक ॥ २ ॥

मोदक-प्रिय, मुद-मंगल-दाता। बिद्या-बारिधि,बुद्धि बिधाता ॥ ३ ॥

माँगत तुलसिदास कर जोरे। बसहिं रामसिय मानस मोरे ॥ ४ ॥

सूर्य-स्तुति
२

दीन-दयालु दिवाकर देवा। कर मुनि,मनुज,सुरासुर सेवा ॥ १ ॥

हिम-तम-करि केहरि करमाली। दहन दोष-दुख-दुरित-रुजाली ॥ २ ॥

कोक-कोकनद-लोक-प्रकासी। तेज-प्रताप-रूप-रस-रासी ॥ ३ ॥

सारथि-पंगु,दिब्य रथ-गामी। हरि-संकर-बिधि-मूरति स्वामी ॥ ४ ॥

बेद पुरान प्रगट जस जागै। तुलसी राम-भगति बर माँगै ॥ ५ ॥

शिव स्तुति
३

को जाँचिये संभु तजि आन।
दीनदयालु भगत-आरति-हर,सब प्रकार समरथ भगवान ॥ १ ॥

कालकूट-जुर जरत सुरासुर,निज पन लागि किये बिष पान।
दारुन दनुज,जगत-दुखदायक, मारेउ त्रिपुर एक ही बान ॥ २ ॥

जो गति अगम महामुनि दुर्लभ,कहत संत,श्रुति,सकल पुरान।
सो गति मरन-काल अपने पुर, देत सदासिव सबहिं समान ॥ ३ ॥

सेवत सुलभ,उदार कलपतरु,पारबती-पति परम सुजान।
देहु काम-रिपु राम-चरन-रति,तुलसिदास कहँ कृपानिधान ॥ ४ ॥

राग धनाश्री

४

दानी कहुँ संकर-सम नाहीं।
दीन-दयालु दिबोई भावै,जाचक सदा सोहाहीं ॥ १ ॥

मारिकै मार थप्यौ जगमें,जाकी प्रथम रेख भट माहीं।
ता ठाकुरकौ रीझि निवाजिबौ,कह्यौ क्यों परत मो पाहीं ॥ २ ॥

जोग कोटि करि जो गति हरिसों,मुनि माँगत सकुचाहीं।
बेद-बिदित तेहि पद पुरारि-पुर,कीट पंतग समाहीं ॥ ३ ॥

ईस उदार उमापति परिहरि,अनत जे जाचन जाहीं।
तुलसिदास ते मूढ माँगने,कबहुँ न पेट अघाहीं ॥ ४ ॥

५

बावरो रावरो नाह भवानी।
दानि बड़ो दिन देत दये बिनु,बेद-बडाई भानी ॥ १ ॥

निज घरकी बरबात बिलोकहु,हौ तुम परम सयानी।
सिवकी दई संपदा देखत, श्री-सारदा सिहानी ॥ २ ॥

जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुखकी नहीं निसानी।
तिन रंकनकौ नाक सँवारत,हौं आयो नकबानी ॥ ३ ॥

दुख-दीनता दुखी इनके दुख,जाचकता अकुलानी।
यह अधिकार सौपिये औरहिं,भीख भली मैं जानी ॥ ४ ॥

प्रेम-प्रसंसा-बिनय-ब्यंगजुत,सुनि बिधिकी बर बानी।
तुलसी मुदित महेस मनहिं मन,जगत-मातु मुसुकानी ॥ ५ ॥

राग रामकली

६

जाँचिये गिरिजापति कासी। जासु भवन अनिमादिक दासी ॥ १ ॥
औढर-दानि द्रवत पुनि थोरें। सकत न देखि दीन करजोरे ॥ २ ॥
सुख-संपति,मति-सुगति सुहाई। सकल सुलभ संकर-सेवकाई ॥ ३ ॥
गये सरन आरतिकै लीन्हे। निरखि निहाल निमिषमहँ कीन्हे ॥ ४ ॥
तुलसिदास जाचक जस गावै। बिमल भगति रघुपतिकी पावै ॥ ५ ॥

७

कस न दीनपर द्रवहु उमाबर। दारुन बिपति हरन करुनाकर ॥ १ ॥
बेद-पुरान कहत उदार हर। हमरि बेर कस भयेहु कृपिनतर ॥ २ ॥
कवनि भगति कीन्ही गुननिधि द्विज। होइ प्रसन्न दीन्हेहु सिव पद निज ॥ ३ ॥
जो गति अगम महामुनि गावहिं। तव पुर कीट पतंगहु पावहिं ॥ ४ ॥
देहु काम-रिपु ! राम -चरन-रति। तुलसिदास प्रभु ! हरहु भेद-मति ॥ ५ ॥

८

देव बड़े,दाता बड़े, संकर बड़े भोरे।
किये दूर दुख सबनिके, जिन्ह-जिन्ह कर जोरे ॥ १ ॥
सेवा, सुमिरन, पूजिबौ, पात आखत थोरे।
दिये जगत जहँ लगि सबै,सुख,गज,रथ,घोरे ॥ २ ॥
गावँ बसत बामदेव, मैं कबहूँ न निहोरे।
अधिभौतिक बाधा भई, ते किंकर तोरे ॥ ३ ॥
बेगि बोलि बलि बरजिये, करतूति कठोरे।
तुलसी दलि, रूँध्यो चहैं सठ साखि सिहोरे ॥ ४ ॥

९

सिव! सिव! होइ प्रसन्न करु दाया।
करुनामय उदार कीरति,बलि जाउँ हरहु निज माया ॥ १ ॥
जलज-नयन,गुन-अयन,मयन-रिपु,महिमा जान न कोई।
बिनु तव कृपा राम-पद-पंकज, सपनेहुँ भगति न होई ॥ २ ॥

रिषय,सिद्ध,मुनि,मनुज,दनुज,सुर,अपर जीव जग माहीं।
तव पद बिमुख न पार पाव कोउ, कलप कोटि चलि जाहीं ॥ ३ ॥

अहिभूषन,दूषन-रिपु-सेवक, देव-देव, त्रिपुरारी।
मोह-निहार-दिवाकर संकर, सरन सोक-भयहारी ॥ ४ ॥

गिरिजा-मन-मानस-मराल, कासीस, मसान-निवासी।
तुलसिदास हरि-चरन-कमल-बर, देहु भगति अबिनासी ॥ ५ ॥

राग धनाश्री

१०

देव,
मोह-तम-तरणि,हर,रुद्र,संकर,शरण,हरण,मम शोक लोकाभिरामं।
बाल-शशि-भाल,सुविशाल लोचन-कमल, काम-सतकोटि-लावण्य-धामं ॥ १ ॥

कंबु-कुंदेंदु-कर्पूर-विग्रह रुचिर, तरुण-रवि-कोटि तनु तेज भ्राजै।
भस्म सर्वांग अर्धांग शैलात्मजा, व्याल-नृकपाल-माला विराजै ॥ २ ॥

मौलिसंकुल जटा-मुकुट विद्युच्छटा, तटिनि-वर-वारि हरि-चरण-पूतं।
श्रवण कुंडल,गरल कंठ, करुणाकंद,सच्चिदानंद वंदेऽवधूतं ॥ ३ ॥

शूल-शायक पिनाकासि-कर,शत्रु-वन-दहन इव धूमध्वज,वृषभ-यानं।
व्याघ्र-गज-चर्म-परिधान,विज्ञान-घन,सिद्ध-सुर-मुनि-मनुज-सेव्यमानं ॥ ४ ॥

तांडवित-नृत्यपर,डमरु डिंडिम प्रवर,अशुभ इव भाति कल्याणाराशी।
महाकल्पांत ब्रह्मांड-मंडल-दवन, भवन कैलास, आसीन काशी ॥ ५ ॥

तज्ञ,सर्वज्ञ,यज्ञेश, अच्युत,विभो,विश्व भवदंशसंभव पुरारी।
ब्रह्मेंद्र,चंद्रार्क,वरुणाग्नि,वसु,मरुत,यम,अर्चि भवदंघ्रि सर्वाधिकारी ॥
अकल, निरुपाधि,निर्गुण,निरंजन,ब्रह्म, कर्म-पथमेकमज निर्विकारं।
अखिलविग्रह,उग्ररूप,शिव,भूपसुर, सर्वगत,शर्व सर्वोपकारं ॥ ७ ॥

ज्ञान-वैराग्य,धन-धर्म,कैवल्य-सुख, सुभग सौभाग्य शिव!सानुकूलं।
तदपि नर मूढ आरूढ संसार-पथ, भ्रमत भव,विमुख तव पादमूलं ॥ ८ ॥

नष्टमति,दुष्ट अति,कष्ट-रत,खेद-गत, दास तुलसी शंभु-शरण आया।
देहि कामारि! श्रीराम-पद-पंकज भक्ति अनवरत गत-भेद-माया ॥ ९ ॥

भैरवरूप शिव-स्तुति

११

देव,
भीषणाकार,भैरव,भयंकर,भूत-प्रेत-प्रमथाधिपति,विपति-हर्ता।
मोह-मूषक-मार्जार,संसार-भय-हरण,तारण-तरण,अभय कर्ता ॥ १ ॥

अतुल बल, विपुलविस्तार,विग्रहगौर, अमल अति धवल धरणीधराभं।
शिरसि संकुलित-कल-जूट पिंगलजटा, पटल शत-कोटि-विद्युच्छटाभं ॥ २ ॥

भ्राज विबुधापगा आप पावन परम, मौलि-मालेव शोभा विचित्रं।
ललित लल्लाटपर राज रजनीशकल, कलाधर,नौमि हर धनद-मित्रं ॥ ३ ॥

इंदु-पावक-भानु-नयन,मर्दन-मयन, गुण-अयन,ज्ञान-विज्ञान-रूपं।
रमण-गिरिजा,भवन भूधराधिप सदा, श्रवण कुंडल,वदनछवि अनूपं ॥ ४ ॥

चर्म-असि-शूल-धर,डमरु-शर-चाप-कर, यान वृषभेश,करुणा-निधानं।
जरत सुर-असुर,नरलोक शोकाकुलं, मृदुलचित,अजित,कृत गरलपानं ॥ ५ ॥

भस्म तनु-भूषणं,व्याघ्र-चर्माम्बरं, उरग-नर-मौलि उर मालधारी।
डाकिनी,शाकिनी,खेचरं,भूचरं, यंत्र-मंत्र-भंजन,प्रबल कल्मषारी ॥ ६ ॥

काल-अतिकाल,कलिकाल,व्यालादि-खग, त्रिपुर-मर्दन,भीम-कर्म भारी।
सकल लोकान्त-कल्पान्त शूलाग्र कृत दिग्गजाव्यक्त-गुण नृत्यकारी ॥ ७ ॥

पाप-संताप-घनघोर संसृति दीन, भ्रमत जग योनि नहिं कोऽपि त्राता।
पाहि भैरव-रूप राम-रूपी रुद्र,बंधु,गुरु,जनक,जननी,विधाता ॥ ८ ॥

यस्य गुण-गण गणति विमल मति शारधा,निगम नारद-प्रमुख ब्रह्मचारी।
शेष,सर्वेश,आसीन आनंदवन,दास टुलसी प्रणत-त्रासहारी ॥ ९ ॥

१२

सदा-
शंकरं,शंप्रदं,सज्जनानंददं,शैल-कन्या-वरं,परमरम्यं।
काम-मदमोचनं,तामरस-लोचनं,वामदेवं भजे भावगम्यं ॥ १ ॥

कंबु-कुंदेंदु-कर्पूर-गौरं शिवं,सुंदरं, सच्चिदानंदकंदं।
सिद्ध-सनकादि-योगींद्र-वृंदारका,विष्णु-विधि-वन्द्य चरणारविंदं ॥ २ ॥

ब्रह्म-कुल-वल्लभं,सुलभ मति दुर्लभं,विकट-वेषं,विभुं,वेदपारं।
नौमि करुणाकरं,गरल-गंगाधरं,निर्मलं,निर्गुणं,निर्विकारं ॥ ३ ॥

लोकनाथं,शोक-शूल-निर्मूलिनं,शूलिनं मोह-तम-भूरि-भानुं।
कालकालं,कलातीतमजरं हरं,कठिन-कलिकाल-कानन-कृशानुं ॥ ४ ॥

तज्ञमज्ञान-पाथोधि-घटसंभवं, सर्वगं, सर्वसौभाग्यमूलं।
प्रचुर-भव-भंजनं,प्रणत-जन-रंजनं,दास तुलसी शरण सानुकूलं ॥ ५ ॥

१३

राग वसन्त

सेवहु सिव-चरन-सरोज-रेनु। कल्यान-अखिल-प्रद कामधेनू ॥ १ ॥

कर्पूर-गौर, करुना-उदार। संसार-सार,भुजगेन्द्र-हार ॥ २ ॥

सुख-जन्मभूमि,महिमा अपार। निर्गुन, गुननायक,निराकार ॥ ३ ॥

त्रयनयन,मयन-मर्दन महेस। अहँकार निहार-उदित दिनेस ॥ ४ ॥

बर बाल निसाकर मौलि भ्राज। त्रैलोक-सोकहर प्रमथराज ॥ ५ ॥

जिन्ह कहँ बिधि सुगति न लिखी भाल। तिन्ह की गति कासीपति कृपाल ॥ ६ ॥

उपकारी कोऽपर हर-समान। सुर-असुर जरत कृत गरल पान ॥ ७ ॥

बहु कल्प उपायन करि अनेक। बिनु संभु-कृपा नहिं भव-बिबेक ॥ ८ ॥

बिग्यान-भवन,गिरिसुता-रमन। कह तुलसिदास मम त्राससमन ॥ ९ ॥

१४

देखो देखो, बन बन्यो आजु उमाकंत। मानों देखन तुमहिं आई रितु बसंत ॥ १ ॥

जनु तनुदुति चंपक-कुसुम-माल। बर बसन नील नूतन तमाल ॥ २ ॥

कलकदलि जंघ, पद कमल लाल। सूचत कटि केहरि, गति मराल ॥ ३ ॥

भूषन प्रसून बहु बिबिध रंग। नूपूर किंकिनि कलरव बिहंग ॥ ४ ॥

कर नवल बकुल-पल्लव रसाल। श्रीफल कुच, कंचुकिलता-जाल ॥ ५ ॥

आनन सरोज, कच मधुप गुंज। लोचन बिसाल नव नील कंज ॥ ६ ॥

पिक बचन चरित बर बर्हि कीर। सित सुमन हास,लीला समीर ॥ ७ ॥

कह तुलसिदास सुनु सिव सुजान। उर बसि प्रपंच रचे पंचबान ॥ ८ ॥

करि कृपा हरिय भ्रम-फंद काम। जेहि हृदय बसहिं सुखरासि राम ॥ ९ ॥

देवी-स्तुति

राग मारू

१५

दुसह दोष-दुख,दलनि, करु देवि दाया।
विश्व-मूलाऽसि,जन-सानुकूलाऽसि,कर शूलधारिणि महामूलमाया ॥ १ ॥

तडित गर्भाङ्ग सर्वाङ्ग सुन्दर लसत, दिव्य पट भव्य भूषण विराजैं।
बालमृग-मंजु खंजन-विलोचनि,चन्द्रवदनि लखि कोटि रतिमार लाजैं ॥ २ ॥

रूप-सुख-शील-सीमाऽसि,भीमाऽसि,रामाऽसि,वामाऽसि वर बुद्धि बानी।
छमुख हेरंब-अंबासि,जगदंबिके,शंभु-जायासि जय जय भवानी ॥ ३ ॥

चंड-भुजदंड-खंडनि,बिहंडनि महिष मुंड-मद-भंग कर अंग तोरे।
शुंभ-निःशुंभ कुम्भीश रण-केशरिणि,क्रोध-वारीश अरि-वृन्द बोरे ॥ ४ ॥

निगम-आगम-अगम गुर्वि!तव गुन-कथन, उर्विधर करत जेहि सहसजीहा।
देहि मा,मोहि पन प्रेम यह नेम निज, राम घनश्याम तुलसी पपीहा ॥ ५ ॥

राग रामकली

१६

जय जय जगजननि देवि सुर-नर-मुनि-असुर-सेवि,
भुक्ति-मुक्ति-दायनी,भय-हरणि कालिका।
मंगल-मुद-सिद्धि-सदनि,पर्वशर्वरीश-वदनि,
ताप-तिमिर-तरुण-तरणि-किरणमालिका ॥ १ ॥

वर्म, चर्म कर कृपाण, शूल-शेल-धनुषबाण,
धरणि,दलनि दानव-दल,रण-करालिका।
पूतना-पिंशाच-प्रेत-डाकिनी-शाकिनी-समेत,
भूत-ग्रह-बेताल-खग-मृगालि-जालिका ॥ २ ॥

जय महेश-भामिनी, अनेक-रूप-नामिनी,
समस्त-लोक-स्वामिनी,हिमशैल-बालिका।
रघुपति-पद परम प्रेम,तुलसी यह अचल नेम,
देहु ह्वै प्रसन्न पाहि प्रणत-पालिका ॥ ३ ॥

गंगा-स्तुति
राग रामकली
१७

जय जय भगीरथनन्दिनि,मुनि-चय चकोर-चन्दिनि,
नर-नाग-बिबुध-बन्दिनि जय जह्नु बालिका।
बिस्नु-पद-सरोजजासि,ईस-सीसपर बिभासि,
त्रिपथगासि,पुन्यरासि,पाप-छालिका ॥ १ ॥

बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रयताप-हारि,
भँवर बर बिभंगतर तरंग-मालिका।
पुरजन पूजोपहार,सोभित ससि धवलधार,
भंजन भव-भार, भक्ति-कल्पथालिका ॥ २ ॥

निज तटबासी बिहंग, जल-थल-चर पसु-पतंग,
कीट,जटिल तापस सब सरिस पालिका।
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस-बीर,
बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका ॥ ३ ॥

१८

जयति जय सुरसरी जगदखिल-पावनी।
विष्णु-पदकंज-मकरंद इव अम्बुवर वहसि,दुख दहसि,अघवृन्द-विद्राविनी ॥ १ ॥

मिलितजलपात्र-अजयुक्त-हरिचरणरज,विरज-वर-वारि त्रिपुरारि शिर-धामिनी।
जह्नु-कन्या धन्य,पुण्यकृत सगर-सुत,भूधरद्रोणि-विद्दरणि,बहुनामिनी ॥ २ ॥

यक्ष,गंधर्व,मुनि,किन्नरोरग,दनुज,मनुज मज्जहिं सुकृत-पुंज युत-कामिनी।
स्वर्ग-सोपान,विज्ञान-ज्ञानप्रदे,मोह-मद-मदन-पाथोज-हिमयामिनी ॥ ३ ॥

हरित गंभीर वानीर दुहुँ तीरवर,मध्य धारा विशद,विश्व अभिरामिनी।
नील-पर्यक-कृत-शयन सर्पेश जनु,सहस सीसावली स्रोत सुर-स्वामिनी ॥ ४ ॥

अमित-महिमा,अमितरूप,भूपावली-मुकुट-मनिवंद्य त्रेलोक पथगामिनी।
देहि रघुबीर-पद-प्रीति निर्भर मातु, दासतुलसी त्रासहरणि भवभामिनी ॥ ५ ॥

१९

हरनि पाप त्रिबिध ताप सुमिरत सुरसरित।

बिलसति महि कल्प-बेलि मुद-मनोरथ-फरित ॥ १ ॥

सोहत ससि धवल धार सुधा-सलिल-भरित।
बिमलतर तरंग लसत रघुबरके-से चरित ॥ २ ॥

तो बिनु जगदंब गंग कलिजुग का करित ?
घोर भव अपारसिंधु तुलसी किमि तरित ॥ ३ ॥

२०

ईस-सीस बससि, त्रिपथ लससि, नभ-पताल-धरनि।
सुर-नर-मुनि-नाग-सिद्ध-सुजन मंगल-करनि ॥ १ ॥

देखत दुख-दोष-दुरित-दाह-दारिद-दरनि।
सगर-सुवन साँसति-समनि,जलनिधि जल भरनि ॥ २ ॥

महिमाकी अवधि करसि बहु बिधि हरि-हरनि।
तुलसी करु बानि बिमल, बिमल बारि बरनि ॥ ३ ॥

यमुना-स्तुति
राग बिलावल
२१

जमुना यों ज्यों ज्यों लागी बाढ़न।
त्यों त्यों सुकृत-सुभट कलि भूपहिं, निदरि लगे बहु काढ़न ॥ १ ॥

ज्यों ज्यों जल मलीन त्यों त्यों जमगन मुख मलीन लहै आढ़ न।
तुलसिदास जगदघ जवास ज्यों अनघमेघ लगे डाढ़न ॥ २ ॥

काशी-स्तुति
राग भैरव
२२

सेइअ सहित सनेह देह भरि, कामधेनु कलि कासी।
समनि सोक-संताप-पाप-रुज,सकल-सुमंगल-रासी ॥ १ ॥

मरजादा चहुँओर चरनबर,सेवत सुरपुर-बासी।
तीरथ सब सुभ अंग रोम सिवलिंग अमित अबिनासी ॥ २ ॥

अंतराइन ऐन भल,थन फल, बच्छ बेद-बिस्वासी।
गलकंबल बरुना बिभाति जनु,लूम लसति,सरिताऽसी ॥ ३ ॥

दंडपानि भैरव बिषान, मलरुचि-खलगन-भयदा-सी।
लोलदिनेस त्रिलोचन लोचन,करनघंट घंटा-सी ॥ ४ ॥

मनिकर्निका बदन-ससि सुंदर,सुरसरि-सुख सुखमा-सी।
स्वारथ परमारथ परिपूरन,पंचकोसि महिमा-सी ॥ ५ ॥

बिस्वनाथ पालक कृपालुचित,लालति नित गिरिजा-सी।
सिद्धि सची, सारद पूजहिं मन जोगवति रहति रमा-सी ॥ ६ ॥

पंचाच्छरी प्रान,मुद माधव,गब्य सुपंचनदा-सी।
ब्रह्म-जीव-सम रामनाम जुग,आखर बिस्व बिकासी ॥ ७ ॥

चारितु चरति करम कुकरम करि,मरत जीवगन घासी।
लहत परमपद पय पावन ,जेहि चहत प्रपंच-उदासी ॥ ८ ॥

कहत पुरान रची केसव निज कर-करतूति कला-सी।
तुलसी बसि हरपुरी राम जपु,जो भयो चहै सुपासी ॥ ९ ॥

चित्रकूट-स्तुति
राग बसन्त
२३

सब सोच-बिमोचन चित्रकूट। कलिहरन,करन कल्यान बूट ॥ १ ॥

सुचि अवनि सुहावनि आलबाल। कानन बिचित्र,बारी बिसाल ॥ २ ॥

मंदाकिनि-मालिनि सदा सींच। बर बारि,बिषम नर-नारि नीच ॥ ३ ॥

साखा सुसृंग,भूरुह-सुपात। निरझर मधुबर,मृदु मलय बात ॥ ४ ॥

सुक,पिक,मधुकर,मुनिबर बिहारु। साधन प्रसून फल चारि चारु ॥ ५ ॥

भव-घोरघाम-हर सुखद छाँह। थप्यो थिर प्रभाव जानकी-नाह ॥ ६ ॥

साधक-सुपथिक बडे भाग पाइ। पावत अनेक अभिमत अघाइ ॥ ७ ॥

रस एक,रहित-गुन-करम-काल। सिय राम लखन पालक कृपाल ॥ ८ ॥

तुलसी जो राम पद चहिय प्रेम। सेइय गिरि करि निरुपाधि नेम ॥ ९ ॥

राग कान्हरा
२४

अब चित चेति चित्रकूटहि चलु।
कोपित कलि, लोपित मंगल मगु, बिलसत बढ़त मोह-माया-मलु ॥ १ ॥

भूमि बिलोकु राम-पद-अंकित, बन बिलोकु रघुबर-बिहारथलु।
सैल-सृंग भवभंग-हेतु लखु, दलन कपट-पाखंड-दंभ-डलु ॥ २ ॥

जहँ जनमे जग-जनक जगपति, बिधि-हरि परिहरि प्रपंच छलु।
सकृत प्रबेस करत जेहि आस्रम, बिगत-बिषाद भये पारथ नलु ॥ ३ ॥

न करु बिलंब बिचारु चारुमति, बरष पाछिले सम अगिले पलु।
मंत्र सो जाइ जपहि, जो जपि भे, अजर अमर हर अचइ हलाहलु ॥ ४ ॥

रामनाम-जप जाग करत नित, मज्जत पय पावन पीवत जलु।
करिहैं राम भावतौ मनकौ, सुख-साधन, अनयास महाफलु ॥ ५ ॥

कामदमनि कामता,कलपतरु सो जुग-जुग जागत जगतीतलु।
तुलसी तोहि बिसेषि बूझिये, एक प्रतीति प्रीति एकै बलु ॥ ६ ॥

हनुमत-स्तुति
राग धनाश्री
२५

जयत्यंजनी-गर्भ-अंभोधि-संभूत विधु विबुध-कुल-कैरवानंदकारी।
केसरी-चारु-लोचन चकोरक-सुखद, लोकगन-शोक-संतापहारी ॥ १ ॥

जयति जय बालकपि केलि-कौतुक उदित-चंडकर-मंडल-ग्रासकर्त्ता।
राहु-रवि-शक्र-पवि-गर्व-खर्वीकरण शरण-भयहरण जय भुवन-भर्ता ॥ २ ॥

जयति रणधीर, रघुवीरहित,देवमणि,रुद्र-अवतार, संसार-पाता।
विप्र-सुर-सिद्ध-मुनि-आशिषाकारवपुष,विमलगुण,बुद्धि-वारिधि-विधाता ॥ ३ ॥

जयति सुग्रीव-ऋक्षादि-रक्षण-निपुण,बालि-बलशालि-बध-मुख्यहेतू।
जलधि-लंघन सिंह सिंहिंका-मद-मथन,रजनिचर-नगर-उत्पात-केतू ॥ ४ ॥

जयति भूनन्दिनी-शोच-मोचन विपिन-दलन घननादवश विगतशंका।
लूमलीलाऽनल-ज्वालमालाकुलित होलिकाकरण लंकेश-लंका ॥ ५ ॥

जयति सौमित्र रघुनंदनानंदकर,ऋक्ष-कपि-कटक-संघट-विधायी।
बद्ध-वारिधि-सेतु अमर-मंगल-हेतु,भानुकुलकेतु-रण-विजयदायी ॥ ६ ॥

जयति जय वज्रतनु दशन नख मुख विकट,चंड-भुजदंड तरु-शैल-पानी।
समर-तैलिक-यंत्र तिल-तमीचर-निकर,पेरि डारे सुभट घालि घानी ॥ ७ ॥

जयति दशकंठ-घटकर्ण-वारिद-नाद-कदन-कारन,कालनेमि-हंता।
अघटघटना-सुघट सुघट-विघटन विकट,भूमि-पाताल-जल-गगन-गंता ॥ ८ ॥

जयति विश्व-विख्यात बानैत-विरुदावली,विदुष बरनत वेद विमल बानी।
दास तुलसी त्रास शमन सीतारमण संग शोभित राम-राजधानी ॥ ९ ॥

२६

जयति मर्कटाधीश ,मृगराज-विक्रम,महादेव,मुद-मंगलालय,कपाली।
मोह-मद-क्रोध-कामादि-खल-संकुला,घोर संसार-निशि किरणमाली ॥ १ ॥

जयति लसदंजनाऽदितिज,कपि-केसरी-कश्यप-प्रभव,जगदार्त्तिहर्त्ता।
लोक-लोकप-कोक-कोकनद-शोकहर,हंस हनुमान कल्यानकर्ता ॥ २ ॥

जयति सुविशाल-विकराल-विग्रह,वज्रसार सर्वांग भुजदण्ड भारी।
कुलिशनख, दशनवर लसत,बालधि बृहद, वैरि-शस्त्रास्त्रधर कुधरधारी ॥ ३ ॥

जयति जानकी-शोच-संताप-मोचन,रामलक्ष्मणानंद-वारिज-विकासी।
कीस-कौतुक-केलि-लूम-लंका-दहन,दलन कानन तरुण तेजरासी ॥ ४ ॥

जयति पाथोधि-पाषाण-जलयानकर,यातुधान-प्रचुर-हर्ष-हाता।
दुष्टरावण-कुंभकर्ण-पाकारिजित-मर्मभित्,कर्म-परिपाक-दाता ॥ ५ ॥

जयति भुवननैकभूषण,विभीषणवरद,विहित कृत राम-संग्राम साका।
जयति पर-यत्रंमंत्राभिचार-ग्रसन,कारमन-कूट-कृत्यादि-हंता।
शाकिनी-डाकिनी-पूतना-प्रेत-वेताल-भूत-प्रमथ-यूथ-यंता ॥ ७ ॥

पुष्पकारूढ़ सौमित्रि-सीता-सहित,भानु-कुलभानु-कीरति-पताका ॥
जयति वेदान्तविद विविध-विद्या-विशद,वेद-वेदांगविद ब्रह्मवादी।
ज्ञान- विज्ञान-वैराग्य-भाजन विभो,विमल गुण गनति शुकनारदादी ॥ ८ ॥

जयति काल-गुण-कर्म-माया-मथन, निश्चलज्ञान,व्रत-सत्यरत,धर्मचारी।
सिद्ध-सुरवृंद-योगींद्र-सेवति सदा,दास तुलसी प्रणत भय-तमारी ॥ ९ ॥

२७

जयति मंगलागार, संसारभारापहर,वानराकारविग्रह पुरारी।
राम-रोषानल-ज्वालमाला-मिष ध्वांतर-सलभ-संहारकारी ॥ १ ॥

जयति मरुदंजनामोद-मंदिर,नतग्रीव सुग्रीव-दुखःखैकबंधो।
यातुधानोद्धत-क्रुद्ध-कालाग्निहर,सिद्ध-सुर-सज्जनानंद-सिंधो ॥ २ ॥

जयति रुद्राग्रणी,विश्व-वंद्याग्रणी, विश्वविख्यात-भट-चक्रवर्ती।
सामगाताग्रणी,कामजेताग्रणी,रामहित,रामभक्तानुवर्ती ॥ ३ ॥

जयतिसंग्रामजय, रामसंदेसहर,कौशला-कुशल-कल्याणभाषी।
राम-विरहार्क-संतप्त-भरतादि-नरनारि-शीतलकरण कल्पशाषी ॥ ४ ॥

जयति सिंहासनासीन सीतारमण,निरखि निर्भरहरण नृत्यकारी।
राम संभ्राज शोभा-सहित सर्वदा तुलसिमानस-रामपुर-विहारी ॥ ५ ॥

२८

जयति वात-संजात,विख्यात विक्रम,बृहद्बाहु,बलबिपुल,बालधिबिसाला।
जातरूपाचलाकारविग्रह,लसल्लोम विद्युल्लता ज्वालमाला ॥ १ ॥

जयति बालार्क वर-वदन,पिंगल-नयन,कपिश-कर्कश-जटाजूटधारी।
विकट भृकुटी,वज् दशन नख,वैरि-मदमत्त-कुंजर-पुंज-कुंजरारी ॥ २ ॥

जयति भीमार्जुन-व्यालसूदन-गर्वहर, धनंजय-रथ-त्राण-केतू।
भीष्म-द्रोण-कर्णादि-पालित,कालदृक सुयोधन-चमू-निधन-हेतू ॥ ३ ॥

जयति गतराजदातार,हंतार संसार-संकट,दनुज-दर्पहारी।
ईति-अति-भीति-ग्रह-प्रेत-चौरानल-व्याधिबाधा-शमन घोर मारी ॥ ४ ॥

जयति निगमागम व्याकरण करणलिपि,काव्यकौतुक-कला-कोटि-सिंधो।
सामगायक, भक्त-कामदायक,वामदेव,श्रीराम-प्रिय-प्रेम बंधो ॥ ५ ॥

जयति घर्माशु-संदग्ध-संपाति-नवपक्ष-लोचन-दिव्य-देहदाता।
कालकलि-पापसंताप-संकुल सदा,प्रणत तुलसीदास तात-माता ॥ ६ ॥

२९

जयति निर्भरानंद-संदोह कपिकेसरी,केसरी-सुवन भुवनैकभर्ता।
दिव्यभूम्यंजना-मंजुलाकर-मणे,भक्त-संताप-चिंतापहर्ता ॥ १ ॥

जयति धमार्थ-कामापवर्गद,विभो ब्रह्मलोकादि-वैभव-विरागी।
वचन-मानस-कर्म सत्य-धर्मव्रती,जानकीनाथ-चरणानुरागी ॥ २ ॥

जयति बिहगेश-बलबुद्धि-बेगाति-मद-मथन,मनमथ-मथन,ऊर्ध्वरेता।
महानाटक-निपुन,कोटि-कविकुल-तिलक,गानगुण-गर्व-गंधर्व-जेता ॥ ३ ॥

जयति मंदोदरी-केश-कर्षण,विद्यमान दशकंठ भट-मुकुट मानी।
भूमिजा-दुःख-संजात रोषांतकृत-जातनाजंतु कृत जातुधानी ॥ ४ ॥

जयति रामायण-श्रवण-संजात-रोमांच,लोचन सजल, शिथिल वाणी।
रामपदपद्म-मकरंद-मधुकर पाहि,दास तुलसी शरण,शूलपाणी ॥ ५ ॥

राग सारंग

३०

जाके गति है हनुमानकी।
ताकी पैज पूजि आई, यह रेखा कुलिस पषानकी ॥ १ ॥

अघटित-घटन, सुघट-बिघटन,ऐसी बिरुदावलि नहिं आनकी।
सुमिरत संकट-सोच-बिमोचन, मूरति मोद-निधानकी ॥ २ ॥

तापर सानुकूल गिरिजा, हर, लषन, राम अरु जानकी।
तुलसी कपिकी कृपा-बिलोकनि, खानि सकल कल्यानकी ॥ ३ ॥

राग गौरी

३१

ताकिहै तमकि ताकी ओर को।
जाको है सब भाँति भरोसो कपि केसरी-किसोरको ॥ १ ॥

जन-रंजन अरिगिन-गंजन मुख-भंजन खल बरजोरको।
बेद-पुरान-प्रगट पुरुषारथ सकल-सुभट-सिरमोर को ॥ २ ॥

उथपे-थपन,थपे उथपन पन,बिबुधबृंद बँदिछोर को।
जलधि लाँघि दहि लंक प्रबल बल दलन निसाचर घोर को ॥ ३ ॥

जाको बालबिनोद समुझि जिय डरत दिवाकर भोरको।
जाकी चिबुक-चोट चूरन किय रद-मद कुलिस कठोरको ॥ ४ ॥

लोकपाल अनुकूल बिलोकिवो चहत बिलोचन-कोरको।
सदा अभय,जय, मुद-मंगलमय जो सेवक रनरोरको ॥ ५ ॥

भगत-कामतरु नाम राम परिपूरन चंद चकोरको।
तुलसी फल चारो करतल जस गावत गईबहोर को ॥ ६ ॥

राग बिलावल

३२

ऐसी तोही न बूझिये हनुमान हठीले।
साहेब कहूँ न रामसे , तोसे न उसीले ॥ १ ॥

तेरे देखत सिंहके सिसु मेंढक लीले।
जानत हौं कलि तेरेऊ मन गुनगन कीले ॥ २ ॥

हाँक सुनत दसकंधके भये बंधन ढीले।
सो बल गयो किधौं भये अब गरबगहीले ॥ ३ ॥

सेवकको परदा फटे तू समरथ सीले।
अधिक आपुते आपुनो सुनि मान सही ले ॥ ४ ॥

साँसति तुलसीदासकी सुनि सुजस तुही ले।
तिहुँकाल तिनको भलौं जे राम-रँगीले ॥ ५ ॥

३३

समरथ सुअन समीरके,रघुबीर-पियारे।
मोपर कीबी तोहि जो करि लेहि भिया रे ॥ १ ॥

तेरी महिमा ते चलै चिंचिनी-चिया रे।
अँधियारो मेरी बार क्यो,त्रिभुवन-उजियारे ॥ २ ॥

केहि करनी जन जानिकै सनमान किया रे।
केहि अघ औगुन आपने कर डारि दिया रे ॥ ३ ॥

खाई खोंची माँगि मैं तेरो नाम लिया रे।
तेरे बल,बलि,आजु लौं जग जागि जिया रे ॥ ४ ॥

जो तोसों होतौ फिरौं मेरो हेतु हिया रे।
तौ कयों बदन देखावतो कहि बचन इयारे ॥ ५ ॥

तोसो ग्यान-निधान को सरबग्य बिया रे।
हौं समुझत साई-द्रोहकी गति छार छिया रे ॥ ६ ॥

तेरे स्वामी राम से,स्वामिनी सिया रे।
तहँ तुलसीके कौनको काको तकिया रे ॥ ७ ॥

३४

अति आरत, अति स्वारथी, अति दीन-दुखारी।
इनको बिलगु न मानिये, बोलहिं न बिचारी ॥ १ ॥

लोक-रीति देखी सुनी, व्याकुल नर-नारी।
अति बरषे अनबरषेहूँ, देहिं दैवहिं गारी ॥ २ ॥

नाकहि आये नाथसों, साँसति भय भारी।
कहि आयो, कीबी छमा, निज ओर निहारी ॥ ३ ॥

समै साँकरे सुमिरिये, समरथ हितकारी।
सो सब बिधि ऊबर करै, अपराध बिसारी ॥ ४ ॥

बिगरी सेवककी सदा,साहेबहिं सुधारी।
तुलसीपर तेरी कृपा, निरुपाधि निरारी ॥ ५ ॥

३५

कटु कहिये गाढे परे, सुनि समुझि सुसाईं।
करहिं अनभलेउ को भलो, आपनी भलाई ॥ १ ॥

समरथ सुभ जो पाइये, बीर पीर पराई।
ताहि तकैं सब ज्यों नदी बारिधि न बुलाई ॥ २ ॥

अपने अपनेको भलो, चहैं लोग लुगाई।
भावै जो जेहि तेहि भजै, सुभ असुभ सगाई ॥ ३ ॥

बाँह बोलि दै थापिये, जो निज बरिआई।
बिन सेवा सों पालिये, सेवककी नाईं ॥ ४ ॥

चूक-चपलता मेरियै, तू बड़ो बड़ाई।
होत आदरे ढीठ है, अति नीच निचाई ॥ ५ ॥

बंदिछोर बिरुदावली, निगमागम गाई।
नीको तुलसीदासको, तेरियै निकाई ॥ ६ ॥

राम गौरी

३६

मंगल-मूरति मारुत-नंदन। सकल-अमंगल-मूल-निकंदन ॥ १ ॥

पवनतनय संतन हितकारी। हृदय बिराजत अवध-बिहारी ॥ २ ॥

मातु-पिता,गुरु,गनपति,सारद। सिवा समेत संभु,सुक,नारद ॥ ३ ॥

चरन बंदि बिनवौं सब काहू। देहु रामपद-नेह-निबाहू ॥ ४ ॥

बंदौं राम-लखन-बैदेही। जे तुलसीके परम सनेही ॥ ५ ॥

लक्ष्मण-स्तुति
दण्डक
३७

लाल लाडिले लखन , हित हौ जनके।
सुमिरे संकटहारी, सकल सुमंगलकारी ,
पालक कृपालु अपने पनके ॥ १ ॥

धरनी-धरनहार भंजन-भुवनभार ,
अवतार साहसी सहसफनके ॥
सत्यसंध, सत्यब्रत, परम धरमरत ,
निरमल करम बचन अरु मन के ॥ २ ॥

रूपके निधान, धनु-बान पानि,
तून कटि, महाबीर बिदित, जितैया बड़े रनके ॥
सेवक-सुख-दायक, सबल, सब लायक,
गायक जानकीनाथ गुनगनके ॥ ३ ॥

भावते भरत के, सुमित्रा-सीताके दुलारे ,
चातक चतुर राम स्याम घनके ॥
बल्लभ उरमिलाके, सुलभ सनेहबस ,
धनी धन तुलसीसे निरधनके ॥ ४ ॥

राग धनाश्री
३८

जयति
लक्ष्मणानंत भगवंत भूधर, भुजग-
राज, भुवनेश, भूभारहारी।

प्रलय-पावक-महाज्वालमाला-वमन,
शमन-संताप लीलावतारी ॥ १ ॥

जयति दाशरथि, समर-समरथ, सुमित्रा-
सुवन, शत्रुसूदन, राम-भरत-बंधो।
चारु-चंपक-वरन, वसन-भूषन-धरन,
दिव्यतर, भव्य, लावण्य-सिधों ॥ २ ॥

जयति गाधेय-गौतम-जनक-सुख-जनक,
विश्व-कंटक-कुटिल-कोटि-हंता।
वचन-चय-चातुरी-परशुधर-गरबहर,
सर्वदा रामभद्रानुगंता ॥ ३ ॥

जयति सीतेश-सेवासरस , बिषयरस-
निरस, निरुपाधि धुरधर्मधारी।
विपुलबलमूल शार्दूलविक्रम जलद-
नाद-मर्दन, महावीर भारी ॥ ४ ॥

जयति संग्राम-सागर-भयंकर-तरन,
रामहित-करण वरबाहु-सेतु।
उर्मिला-रवन, कल्याण-मंगल-भवन,
दासतुलसी-दोष-दवन-हेतू ॥ ५ ॥

भरत-स्तुति
३९

जयति
भूमिजा-रमण-पदकंज-मकरंद-रस-
रसिक-मधुकर भरत भूरिभागी।
भुवन-भूषण, भानुवंश-भूषण, भूमिपाल-
मनि रामचंद्रानुरागी ॥ १ ॥

जयति विबुधेश-धनदादि-दुर्लभ-महा-
राज-संग्राज-सुख-पद-विरागी।
खड्ग-धाराव्रती-प्रथमरेखा प्रकट
शुद्धमति-युवति पति-प्रेमपागी ॥ २ ॥

जयति निरुपाधि-भक्तिभाव-यंत्रित-हृदय ,
बंधु-हित चित्रकुटाद्रि-चारी।
पादुका-नृप-सचिव,पुहुमि-पालक परम
धरम-धुर-धीर, वरवीर भारी ॥ ३ ॥

जयति संजीवनी-समय-संकट हनूमान
धनुबान-महिमा बखानी।
बाहुबल बिपुल परमिति पराक्रम अतुल,
गूढ गति जानकी-जानि जानी ॥ ४ ॥

जयति रण-अजिर गन्धर्व-गण-गर्वहर,
फिर किये रामगुणगाथ-गाता।
माण्डवी-चित्त-चातक-नवांबुद-बरन,
सरन तुलसीदास अभय दाता ॥ ५ ॥

शत्रुघ्न-स्तुति
राग धनाश्री
४०

जयति जय शत्रु-करि-केसरी शत्रुहन,
शत्रुतम-तुहिनहर किरणकेतू।
देव-महिदेव-महि-धेनु-सेवक सुजन-
सिद्धि-मुनि-सकल-कल्याण-हेतू ॥ १ ॥

जयति सर्वांगसुदंर सुमित्रा-सुवन,
भुवन-विख्यात-भरतानुगामी।
वर्मचर्मासी-धनु-बाण-तूणीर-धर
शत्रु-संकट-समय यत्प्रणामी ॥ २ ॥

जयति लवणाम्बुनिधि-कुंभसंभव महा-
दनुज-दुर्जनदवन, दुरितहारि।
लक्ष्मणानुज, भरत-राम-सीता-चरण-
रेणु-भूषित-भाल-तिलकधारी ॥ ३ ॥

जयति श्रुतिकीर्ति-वल्लभ सुदुर्लभ सुलभ
नमत नर्मद भुक्तिमुक्तिदाता।
दासतुलसी चरण-शरण सीदत विभो,

पाहि दीनार्त्त-संताप-हाता ॥ ४ ॥

श्रीसीता-स्तुति

राग केदारा

४१

कबहुँक अंब, अवसर पाइ।
मेरिऔ सुधि द्याइबी,कछु करुन-कथा चलाइ ॥ १ ॥

दीन, सब अँगहीन,छीन,मलीन,अघी अघाइ।
नाम लै भरै उदर एक प्रभु-दासी-दास कहाइ ॥ २ ॥

बूझिहैं 'सो है कोन', कहिबी नाम दसा जनाइ।
सुनत राम कृपालुके मेरी बिगरीऔ बनि जाइ ॥ ३ ॥

जानकी जगजननि जनकी किये बचन सहाइ।
तरै तुलसीदास भव तव नाथ-गुन-गन गाइ ॥ ४ ॥

४२

कबहुँ समय सुधि द्यायबी,मेरी मातु जानकी।
जन कहाइ नाम लेत हौं,किये पन चातक ज्यों,प्यास-प्रेम-पानकी ॥ १ ॥

सरल कहाई प्रकृति आपु जानिए करुना-निधानकी।
निजगुन,अरिकृत अनहितौ,दास-दोष सुरति चित रहत न दिये दानकी ॥
बानि बिसारनसील है मानद अमानकी।
तुलसीदास न बिसारिये,मन करम बचन जाके,सपनेहुँ गति न आनकी ॥

श्रीराम-स्तुति

४३

जयति
सच्चिदव्यापकानंद परब्रह्म-पद विग्रह-व्यक्त लीलावतारी।
विकल ब्रह्मादि,सुर,सिद्ध,संकोचवश,विमल गुण-गेह नर-देह-धारी। १।

जयति
कोशलाधीश कल्याण कोशलसुता,कुशल कैवल्य-फल चारु चारी।
वेद-बोधित करम-धरम-धरनीधेनु,विप्र-सेवक साधु-मोदकारी ॥ २ ॥

जयति ऋषि-मखपाल,शमन-सज्जन-साल,शापवश मुनिवधू-पापहारी।

भंजि भवचाप,दलि दाप भूपावली,सहित भृगुनाथ नतमाथ भारी ॥ ३ ॥

जयति धारमिक-धुर,धीर रघुवीर गुर-मातु-पितु-बंधु-वचनानुसारी।
चित्रकूटाद्रि विन्ध्याद्रि दंडकविपिन,धन्यकृत पुन्यकानन-विहारी ॥ ४ ॥

जयति पाकारिसुत-काक-करतूति-फलदानि खनि गर्त गोपित विराधा।
दिव्य देवी वेश देखि लखि निशिचरी जनु विडंबित करी विश्वबाधा ॥ ५ ॥

जयति खर-त्रिशिर-दूषण चतुर्दश-सहस-सुभट-मारीच-संहारकर्ता।
गृध्र-शबरी-भक्ति-विवश करुणासिंधु,चरित निरुपाधि,त्रिविधार्तिहर्ता ॥ ६ ॥

जयति मद-अंध कुकबंध बधि,बालि बलशालि बधि,करन सुग्रीव राजा।
सुभट मर्कट-भालु-कटक-संघट सजत,नमत पद रावणानुज निवाजा ॥ ७ ॥

जयति पाथोधि-कृत-सेतु कौतुक हेतु,काल-मन अगम लई ललकि लंका।
सकुल,सानुज,सदल दलित दशकंठ रण,लोक-लोकप किये रहित-शंका ॥ ८ ॥

जयति सौमित्रि-सीता-सचिव-सहित चले पुष्पकारुढ निज राजधानी।
दासतुलसी मुदित अवधवासी सकल,राम भे भूप वैदेहि रानी ॥ ९ ॥

४४

जयति
राज-राजेंद्र राजीवलोचन,राम
नाम कलि-कामतरु,साम-शाली।
अनय-अंभोधि-कुंभज,निशाचर-निकर-
तिमिर-घनघोर-खरकिरणमाली ॥ १ ॥

जयति मुनि-देव-नरदेव दसरत्थके ,
देव-मुनि-वंद्य किय अवध-वासी।
लोक नायक-कोक-शोक-संकट-शमन,
भानुकुल-कमल कानन-विकासी ॥ २ ॥

जयति शृंगार-सर तामरस-दामदुति-
देह,गुणगेह,विश्वोपकारी ॥ ।३ ॥

सकल सौभाग्य-सौंदर्य-सुषमारुप,
मनोभव कोटि गर्वापहारी ॥ ३ ॥

(जयति) सुभग सारंग सुनिखंग सायक शक्ति,

चारु चर्मासि वर वर्मधारी।
धर्मधुरधीर,रघुवीर,भुजबल अतुल,।
हेलया दलित भूभार भारी ॥ ४ ॥

जयति कलधौत मणि-मुकुट,कुंडल,तिलक-
झलक भलि भाल,विधु-वदन-शोभा।
दिव्य भूषन,वसन पीत,उपवीत,
किय ध्यान कल्यान-भाजन न को भा ॥ ५ ॥

(जयति)भरत-सौमित्रि-शत्रुघ्न-सेवित,सुमुख,
सचिव-सेवक-सुखद, सर्वदाता ॥
अधम,आरत,दीन,पतित,पातक-पीन
सकृत नतमात्र कहि 'पाहि' पाता ॥ ६ ॥

जयति जय भुवन दसचारि जस जगमगत,
पुन्यमय,धन्य जय रामराजा।
चरित-सुरसरित कवि-मुख्य गिरि निःसरित,
पिबत,मज्जत मुदित सँत-समाजा ॥ ७ ॥

जयति वर्णाश्रमाचारपर नारि-नर,
सत्य-शम-दम-दया-दानशीला।
विगत दुख-दोष,संतोस सुख सर्वदा,
सुनत,गावत राम राजलीला ॥ ८ ॥

जयति वैराग्य-विज्ञान-वारांनिधे
नमत नर्मद,पाप-ताप-हर्ता।
दास तुलसी चरण शरण संशय-हरण,
देहि अवलंब वैदेहि-भर्ता ॥ ९ ॥

राग गौरी
४५

श्री रामचंद्र कृपालु भजु मन हरण भवभय दारुणं।
नवकंज-लोचन,कंज-मुख,कर-कंज,पद कंजारुणं ॥ १ ॥

कंदर्प अगणित अमित छवि,नवनिल नीरद सुंदरं।
पट पीत मानहु तडित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं ॥ २ ॥

भजु दीनबंधु दिनेश दानव-दैत्य-वंश निकंदनं।
रघुनंद आनँदकंद कोशलचंद दशरथ-नंदनं ॥ ३ ॥

सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदारु अंग विभूषणं।
आजानुभुज शर-चाप-धर,संग्राम-जित-खरदूषणं ॥ ४ ॥

इति वदति तुलसीदास शंकर-शेष-मुनि-मन-रंजनं।
मम हृदय कंज निवास करु कामादि खल-दल-गंजनं ॥ ५ ॥

राग रामकली

४६

सदा
राम जपु,राम जपु,राम जपु, राम जपु, राम जपु, मूढंअन बार बारं।
सकल सौभाग्य-सुख-खानि जिय जानि शठ,मानि विश्वास वद वेदसारं ॥
कोशलेन्द्र नव-नीलकंजाभतनु,मदन-रिपु-कंजहृदि-चंचरीकं।
जानकीरवन सुखभवन भुवनैकप्रभु,समर-भंजन,परम कारुनीकं ॥ २ ॥

दनुज-वन धूमधुज,पीन आजानुभुज,दंड-कोदंडवर चंड बानं।
अरुनकर चरण मुख नयन राजीव,गुन-अयन,बहु मयन-शोभा-निधानं ॥ ३ ॥

वासनावृंद-कैरव-दिवाकर, काम-क्रोध-मद कंज-कानन-तुषारं।
लोभ अति मत्त नागेंद्र पंचानन भक्तहित हरण संसार-भारं ॥ ४ ॥

केशवं,क्लेशहं,केश-वंदित पद-द्वंद्व मंदाकिनी-मूलभूतं।
सर्वदानंद-संदोह,मोहापहं, घोर-संसार-पाथोधि-पोतं ॥ ५ ॥

शोक-संदेह-पाथोदपटलानिलं, पाप-पर्वत-कठिन-कुलिशरूपं।
संतजन-कामधुक-धेनु,विश्रामप्रद, नाम कलि-कलुष-भंजन अनूपं ॥ ६ ॥

धर्म-कल्पद्रुमाराम, हरिधाम-पथि संबलं, मूलमिदमेव एकं।
भक्ति-वैराग्यं विज्ञान-शम-दान-दम, नाम आधीन साधन अनेकं ॥ ७ ॥

तेन तप्तं,हुतं,दत्तमेवाखिलं, तेन सर्व कृतं कर्मजालं।
येन श्रीरामनामामृतं पानकृतमनिशमनवद्यमवलोक्य कालं ॥ ८ ॥

श्वपच,खल,भिल्ल,यवनादि हरिलोकगत, नामबल विपुल मति मल न परसी।
त्यागि सब आस,संत्रास,भवपास असि निसित हरिनाम जपु दासतुलसी ॥

४७

ऐसी आरती राम रघुबीरकी करहि मन।
हरन दुखदुंद गोबिंद आनन्दघन ॥ १ ॥

अचरचर रूप हरि,सरबगत,सरबदा बसत,इति बासना धूप दीजै।
दीप निजबोधगत-कोह-मद-मोह-तम,प्रौढऽभिमान चितबृति छीजै। २।

भाव अतिशय विशद प्रवर नैवेद्य शुभ श्रीरमण परम संतोषकारी।
प्रेम-तांबूल गत शूल संशय सकल,विपुल भव-बासना-बीजहारी। ३।

अशुभ-शुभकर्म-घृतपूर्ण दश वर्तिका,त्याग पावक, सतोगुण प्रकासं।
भक्ति-वैराग्य-विज्ञान दीपावली,अर्पि नीराजनं जगनिवासं ॥ ४ ॥

बिमल ह्रदि-भवन कृत शांति-पर्यक शुभ,शयन विश्राम श्रीरामराया।
क्षमा-करुणा प्रमुख तत्र परिचारिका,यत्र हरि तत्र नहिं भेद-माया। ५।

एहि
आरती-निरत सनकादि,श्रुति,शेष,शिव,देवरिषि,अखिलमुनि तत्त्व-दरसी
करै सोइ तरै,परिहरै कामादि मल,वदति इति अमलमति-दास तुलसी ॥ ६ ॥

४८

हरति सब आरती आरती रामकी।
दहन दुख-दोष,निरमूलिनी कामकी ॥ १ ॥

सुरभ सौरभ धूप दीपबर मालिका।
उडत अघ-बिहँग सुनि ताल करतालिका ॥ २ ॥

भक्त-ह्रदि-भवन, अज्ञान-तम-हारिनी।
बिमल बिग्यानमय तेज-बिस्तारिनी ॥ ३ ॥

मोह-मद-कोह-कलि-कंज-हिमजामिनी।
मुक्तिकी दूतिका,देह-दुति दामिनी ॥ ४ ॥

प्रनत-जन-कुमुद-बन-इंदु-कर-जालिका।
तुलसि अभिमान-महिषेस बहु कालिका ॥ ५ ॥

हरिशंकरी पद

४९

देव-
दनुज-बन-दहन,गुन-गहन,गोविंद नंदादि-आनंद-दाताऽविनाशी।

शंभु,शिव,रुद्र,शंकर,भयंकर,भीम,घोर,तेजायतन,क्रोध-राशी ॥ १ ॥

अनँत,भगवंत-जगदंत-अंतक-त्रास-शमन,श्रीरमन,भुवनाभिरामं।
भूधराधीश जगदीश ईशान,विज्ञानघन,ज्ञान-कल्यान-धामं ॥ २ ॥

वामनाव्यक्त,पावन,परावर,विभो,प्रकट परमातमा,प्रकृति-स्वामी।
चंद्रशेखर,शूलपाणि,हर,अनघ,अज,अमित,अविछिन्न,वृशभेश-गामी ॥ ३ ॥

नीलजलदाभ तनु श्याम,बहु काम छवि राम राजीवलोचन कृपाला।
कबुं-कर्पूर-वपु धवल,निर्मल मौलि जटा,सुर-तटिनि,सित सुमन माला ॥ ४ ॥

वसन किंजल्कधर,चक्र-सारंग-दर-कंज-कौमोदकी अति विशाला।
मार-करि-मत्त-मृगराज,त्रैनैन,हर,नौमि अपहरण संसार-जाला ॥ ५ ॥

कृष्ण,करुणाभवन,दवन कालीय खल,विपुल कंसादि निर्वशकारी।
त्रिपुर-मद-भंगकर,मत्तगज-चर्मधर,अन्धकोरग-ग्रसन पन्नगारी ॥ ६ ॥

ब्रह्म,व्यापक,अकल,सकल,पर,परमहित,ग्यान,गोतीत,गुण-वृत्ति-हर्त्ता।
सिंधुसुत-गर्व-गिरि-वज्र,गौरीश,भव दक्ष-मख अखिल विध्वंसकर्त्ता ॥ ७ ॥

भक्तिप्रिय,भक्तजन-कामधुक धेनु,हरि हरण दुर्घट विकट विपति भारी।
सुखद,नर्मद,वरद,विरज,अनवघ्यऽखिल,विपिन-आनंद-वीथिन-विहारी
रुचिर हरिशंकरी नाम-मंत्रावली द्वंद्वदुख हरनि,आनंदखानी।
विष्णु-शिव-लोक-सोपान-सम सर्वदा वदति तुलसीदास विशद बानी ॥ ८ ॥

५०

देव-
भानुकुल-कमल-रवि,कोटि कंर्दप-छवि,काल-कलि-व्यालमिव वैनतेयं।
प्रबल भुजदंड परचंड-कोदंड-धर तूणवर विशिख बलमप्रमेयं ॥ १ ॥

अरुण राजीवदल-नयन,सुषमा-अयन,श्याम तन-कांति वर वारिदाभं।
तप्त कांचन-वस्त्र,शस्त्र-विद्या-निपुण,सिद्ध-सुर-सेव्य,पाथोजनाभं ॥
अखिल लावण्य-गृह,विश्व-विग्रह,परम प्रौढ,गुणगूढ,महिमा उदारं।
दुर्धर्ष,दुस्तर,दुर्ग,स्वर्ग-अपवर्ग-पति,भग्न संसार-पादप कुठारं ॥ ३ ॥

शापवश मुनिवधू-मुक्तकृत,विप्रहित,यज्ञ-रक्षण-दक्ष,पक्षकर्ता।
जनक-नृप-सदसि शिवचाप-भंजन,उग्र भार्गवागर्व-गरिमापहर्ता ॥ ४ ॥

गुरु-गिरा-गौरवामर-सुदुस्त्यज राज्य त्यक्त,श्रीसहित सौमित्रि-भ्राता।

संग जनकात्मजा,मनुजमनुसृत्य अज,दुष्ट-वध-निरत,त्रैलोक्यत्राता ॥ ५ ॥

दंडकारण्य कृतपुण्य पावन चरण,हरण मारीच-मायाकुरंगं।
बालि बलमत्त गजराज इव केसरी,सुहृद-सुग्रीव-दुख-राशि-भंगं ॥ ६ ॥

ऋक्ष,मर्कट विकट सुभट उभ्दट समर,शैल-संकाश रिपु त्रासकारी।
बद्धपाथोधि,सुर-निकर-मोचन,सकुल दलन दससीस-भुजबीस भारी ॥ ७ ॥

दुष्ट विबुधारि-संघात,अपहरण महि-भार,अवतार कारण अनूपं।
अमल,अनवद्य,अद्वैत,निर्गुण,सर्गुण,ब्रह्म सुमिरामि नरभूप-रूपं ॥ ८ ॥

शेष-श्रुति-शारदा-शंभु-नारद-सनक गनत गुन अंत नहीं तव चरित्रं।
सोइ राम कामारि-प्रिय अवधपति सर्वदा दासतुलसी-त्रास-निधि वहित्रं ॥ ९ ॥

५१

देव
जानकीनाथ,रघुनाथ,रागादि-तम-तरणि,तारुण्यतनु,तेजधामं।
सच्चिदानंद,आनंदकंदाकरं,विश्व-विश्राम,रामाभिरामं ॥ १ ॥

नीलनव-वारिधर-सुभग-शुभकांति,कटि पीत कौशेय वर वसनधारी।
रत्न-हाटक-जटित-मुकुट-मंडित-मौलि,भानु-शत-सदृश उद्योतकारी ॥ २ ॥

श्रवण कुंडल,भाल तिलक,भ्रूरुचिर अति,अरुण अंभोज लोचन विशालं।
वक्र-अवलोक,त्रैलोक-शोकापहं,मार-रिपु-हृदय-मानस-मरालं ॥ ३ ॥

नासिका चारु सुकपोल,द्विज वज्रदुति,अधर बिंबोपमा,मधुरहासं।
कंठ दर,चिबुक वर,वचन गंभीरतर,सत्य-संकल्प,
सुरत्रास-नासं ॥ ४ ॥

सुमन सुविचित्र नव तुलसिकादल-युतं मृदुल वनमाल उर भ्राजमानं।
भ्रमत आमोदवश मत्त मधुकर-निकर,मधुरतर मुखर कुर्वन्ति गानं ॥ ५ ॥

सुभग श्रीवत्स,केयूर,कंकण,हार,किंकणी-रटनि कटि-तट रसालं।
वाम दिसि जनकजासीन-सिंहासनं कनक-मृदुवल्लित तरु तमालं ॥ ६ ॥

आजानु भुजदंड कोदंड-मंडित वाम बाहु, दक्षिण पाणि बाणमेकं।
अखिल मुनि-निकर,सुर,सिद्ध,गंधर्व वर नमत नर नाग अवनिप अनेकं ॥
अनघ अविछिन्न,सर्वज्ञ,सर्वेश, खलु सर्वतोभद्र-दाताऽसमाकं।
प्रणतजन-खेद-विच्छेद-विद्या-निपुण नौमि श्रीराम सौमित्रिसाकं ॥ ८ ॥

युगल पदपद्म,सुखसद्म पद्मालयं, चिन्ह कुलिशादि शोभाति भारी।
हनुमंत-ह्रदि विमल कृत परममंदिर, सदातुलसी-शरण शोकहारी ॥

५२

देव–

कोशलाधीश,जगदीश,जगदेकहित, अमितगुण,विपुल विस्तार लीला।
गायंति तव चरित सुपवित्र श्रुति-शेष-शुक-शंभु-सनकादि मुनि मननशीला ॥ १ ॥

वारिचर-वपुष धरि भक्त-निस्तारपर, धरणिकृत नाव महिमातिगुर्वी।
सकल यज्ञांशमय उग्र विग्रह क्रोड, मर्दि दनुजेश उद्धरण उर्वी ॥ २ ॥

कमठ अति विकट तनु कठिन पृष्ठोपरी, भ्रमत मंदर कंडु-सुख मुरारी।
प्रकटकृत अमृत,गो,इंदिरा,इंदु, वृंदारकावृंद-आनंदकारी ॥ ३ ॥

मनुज-मुनि-सिद्ध-सुर-नाग-त्रासक, दुष्ट दनुज द्विज-धर्म-मरजाद-हर्त्ता।
अतुल मृगराज-वपुधरित, विद्दरित अरि, भक्त प्रहलाद-अहलाद-कर्त्ता ॥ ४ ॥

छलन बलि कपट-वटुरूप वामन ब्रह्म, भुवन पर्यंत पद तीन करणं।
चरण-नख-नीर-त्रेलोक-पावन परम, विबुध-जननी-दुसह-शोक-हरणं ॥ ५ ॥

क्षत्रियाधीश-करिनिकर-नव-केसरी, परशुधर विप्र-सस-जलदरूपं।
बीस भुजदंड दससीस खंडन चंड वेग सायक नौमि राम भूपं ॥ ६ ॥

भूमिभर-भार-हर,प्रकट परमातमा, ब्रह्म नररूपधर भक्तहेतू।
वृष्णि-कुल-कुमुद-राकेश राधारमण, कंस-बंसाटवी-धूमकेतू ॥ ७ ॥

प्रबल पाखंड महि-मंडलाकुल देखि, निंद्यकृत अखिल मख कर्म-जालं।
शुद्ध बोधैकघन,ज्ञान-गुणधाम, अज बौद्ध-अवतार वंदे कृपालं ॥ ८ ॥

कालकलिजनित-मल-मलिनमन सर्व नर मोह निशि-निबिड़यवनांधकारं।
विष्णुयश पुत्र कलकी दिवाकर उदित दासतुलसी हरण विपतिभारं ॥ ९ ॥

५३

देव–

सकल सौभाग्यप्रद सर्वतोभद्र-निधि, सर्व,सर्वेश,सर्वाभिरामं।
शर्व-ह्रदि-कंज-मकरंद-मधुकर रुचिर-रूप, भूपालमणि नौमि रामं ॥ १ ॥

सर्वसुख-धाम गुणग्राम, विश्रामपद, नाम सर्वसंपदमति पुनीतं।
निर्मलं शांत,सुविशुद्ध,बोधायतन, क्रोध-मद-हरण,करुणा-निकेतं ॥ २ ॥

अजित,निरुपाधि,गोतीतमव्यक्त, विभुमेकमनवद्यमजमद्वितीयं।
प्राकृतं,प्रकट परमातमा,परमहित, प्रेरकानंत वंदे तुरीयं ॥ ३ ॥

भूधरं सुन्दरं,श्रीवरं,मदन-मद-मथन सौन्दर्य-सीमातिरम्यं।
दुष्प्राप्य,दुष्पेक्ष्य,दुस्तर्क्य,दुष्पार, संसारहर,सुलभ,मृदुभाव-गम्यं ॥
सत्यकृत,सत्यरत,सत्यव्रत,सर्वदा, पुष्ट,संतुष्ट,संकष्टहारी।
धर्मवर्मनि ब्रह्मकर्मबोधैक,विप्रपूज्य, ब्रह्मण्यजनप्रिय,मुरारी ॥ ५ ॥

नित्य,निर्मम,नित्यमुक्त,निर्मान, हरि,ज्ञानघन,सच्चिदानंद मूलं।
सर्वरक्षक सर्वभक्षकाध्यक्ष,कूटस्थ, गूढार्चि, भक्तानुकूलं ॥ ६ ॥

सिद्ध-साधक-साध्य,वाच्य-वाचकरूप, मंत्र-जापक-जाप्य,सृष्टि-स्त्रष्टा।
परम कारण,कञ्जनाभ,जलदाभतनु, सगुण,निर्गुण,सकल दृश्य-द्रष्टा ॥ ७ ॥

व्योम-व्यापक,विरज,ब्रह्म,वरदेश, वैकुंठ, वामन विमल ब्रह्मचारी।
सिद्ध-वृंदारकावृंदवंदित सदा, खंडि पाखंड-निर्मूलकारी ॥ ८ ॥

पूरनानंदसंदोह, अपहरन संमोह-अज्ञान, गुण-सन्निपातं।
बचन-मन-कर्म-गत शरण तुलसीदास त्रास-पाथोधि इव कुंभजातं ॥ ९ ॥

५४

देव–
विश्व-विख्यात,विश्वेश,विश्वायतन, विश्वमरजाद,व्यालारिगामी।
ब्रह्म,वरदेश,वागीश,व्यापक,विमल विपुल,बलवान,निर्वानस्वामी ॥ १ ॥

प्रकृति,महतत्व,शब्दादि गुण,देवता व्योम,मरुदग्नि,अमलांबु,उर्वी।
बुद्धि,मन,इंद्रिय,प्राण,चित्तातमा, काल,परमाणु,चिच्छक्ति गुर्वी ॥ २ ॥

सर्वमेवात्र त्वद्रूप भूपालमणि! व्यक्तमव्यक्त, गतभेद,विष्णो।
भुवन भवदंग,कामारि-वंदित, पदद्वंद्व मंदाकिनी-जनक, जिष्णो ॥ ३ ॥

आदिमध्यांत,भगवंत! त्वं सर्वगतमीश, पश्यन्ति ये ब्रह्मवादी।
यथा पट-तंतु,घट-मृतिका, सर्प-स्त्रग,दारुकरि,कनक-कटकांगदादी ॥ ४ ॥

गूढ,गंभीर,गर्वघ्न,गूढार्थवित,गुप्त,गोतीत,गुरु,ग्यान-ग्याता।
ग्येय,ग्यानप्रिय,प्रचुर गरिमागार, घोर-संसार-पर, पार दाता ॥ ५ ॥

सत्यसंकल्प,अतिकल्प,कल्पांतकृत,कल्पनातीत,अहि-तल्पवासी।
वनज-लोचन,वनज-नाभ, वनदाभ-वपु, वनचरध्वज-कोटि-लावण्यरासी ॥ ६ ॥

सुकर,दुःकर,दुराराध्य,दुर्व्यसनहर,दुर्ग,दुर्द्धर्ष,दुर्गार्त्तिहर्त्ता।
वेदगर्भार्भकादर्भ-गुनगर्व, अर्वागपर-गर्व-निर्वाप-कर्त्ता ॥ ७ ॥

भक्त-अनुकूल,भवशूल-निर्मूलकर, तूल-अघ-नाम पावक-समानं।
तरलतृष्णा-तमी-तरणि,धरणीधरण, शरण-भयहरण,करुणानिधानं ॥ ८ ॥

बहुल वृंदारकावृंद-वंदारु-पद-द्वंद्व मंदार-मालोर-धारी।
पाहि मामीश संताप-संकुल सदा दास तुलसी प्रणत रावणारी ॥ ९ ॥

५५

देव–
संत-संतापहर,विश्व-विश्रामकर, रामकामारि,अभिरामकारी।
शुद्ध बोधायतन,सच्चिदानंदघन, सज्जनानंद-वर्धन,खरारी ॥ १ ॥

शील-समता-भवन,विषमता-मति-शमन,राम,रमारमन,रावनारी।
खड्ग,कर चर्मवर,वर्मधर,रुचिरल कटि तूण,शर-शक्ति-सारंगधारी ॥ २ ॥

सत्यसंधान,निर्वानप्रद,सर्वहित, सर्वगुण-ज्ञान-विज्ञानशाली।
सघन-तम-घोर-संसार-भर-शर्वरी नाम दिवसेष खर-किरणमाली ॥ ३ ॥

तपन तीच्छन तरुन तीव्र तापघ्न, तपरूप,तनभूप,तमपर,तपस्वी।
मान-मद-मदन-मत्सर-मनोरथ-मथन, मोह-अंभोधि-मंदर,मनस्वी ॥ ४ ॥

वेद विख्यात,वरदेश,वामन,विरज,विमल,वागीश,वैकुंठस्वामी।
काम-क्रोधादिमर्दन,विवर्धन,छमा-शांति-विग्रह,विहगराज-गामी ॥ ५ ॥

परम पावन,पाप-पुंज-मुंजावटी-अनल इव निमिष निर्मूलकर्त्ता।
भुवन-भूषण,दूषणारि-भुवनेश,भूनाथ,श्रुतिमाथ जय भुवनभर्ता ॥ ६ ॥

अमल,अविचल,अकल,सकल,संतप्त-कलि-विकलता-भंजनानंदरासी।
उरगनायक-शयन,तरुणपंकज-नयन,छीरसागर-अयन,सर्ववासी ॥ ७ ॥

सिद्ध-कवि-कोविकानंद-दायक पदद्वंद्व मंदात्ममनुजैर्दुरापं।
यत्र संभूत अतिपूत जल सुरसरी दर्शनादेव अपहरति पापं ॥ ८ ॥

नित्य निर्मुक्त,संयुक्तगुण,निर्गुणानंद,भगवंत,न्यामक,नियंता।
विश्व-पोषण-भरण,विश्व-कारण-करण, शरण तुलसीदास त्रास-हंता ॥ ९ ॥

५६

देव–

दनुजसूदन दयासिंधु,दंभापहन दहन दुर्दोष,दर्पापहर्त्ता।
दुष्टतादमन,दमभवन,दुःखौघहर दुर्ग दुर्वासना नाश कर्त्ता ॥ १ ॥

भूरिभूषण,भानुमंत,भगवंत, भवभंजनाभयद,भुवनेश भारी।
भावनातीत,भववंद्य,भवभक्तहित, भूमिउद्धरण,भूधरण-धारी ॥ २ ॥

वरद,वनदाभ,वागीश,विश्वात्मा, विरज,वैकुण्ठ-मन्दिर-विहारी।
व्यापक व्योम,वंदारु,वामन,विभो,ब्रह्मविद,ब्रह्म,चिंतापहारी ॥ ३ ॥

सहज सुन्दर,सुमुख,सुमन,शुभ सर्वदा, शुद्धसर्वज्ञ,स्वछन्दचारी।
सर्वकृत,सर्वभृत,सर्वजित,सर्वहित, सत्य-संकल्प,कल्पांतकारी ॥ ४ ॥

नित्य,निर्मोह,निर्गुण,निरंजन, निजानंद,निर्वाण,निर्वाणदाता।
निर्भरानंद,निःकंप,निःसीम,निर्मुक्त, निरुपाधि,निर्मम,विधाता ॥ ५ ॥

महामंगलमूल,मोद-महिमायतन,मुग्ध-मधु-मथन,मानद,अमानी।
मदनमर्दन,मदातीत,मायारहित, मंजु मानाथ,पाथोजपानी ॥ ६ ॥

कमल-लोचन,कलाकोश,कोदंडधर,कोशलाधीश,कल्याणराशी।
यातुधान प्रचुर मत्तकरि-केसरी, भक्तमन-पुण्य-आरण्यवासी ॥ ७ ॥

अनघ,अद्वैत,अनवद्य,अव्यक्त,अज, अमित अविकार,आनंदसिंधो।
अचल,अनिकेत,अविरल,अनामय, अनारंभ,अंभोदनादहन-बंधो ॥ ८ ॥

दासतुलसी खेदखिन्न,आपन्न इह, शोकसंपन्न अतिशय सभीतं।
प्रणतपालक राम, परम करुणाधाम, पाहि मामुर्विपति,दुर्विनीतं ॥ ९ ॥

५७

देव–

देहि सतसंग निज-अंग श्रीरंग! भवभंग-कारण शरण-शोकहारी।
ये तु भवदघ्रिपल्लव-समाश्रित सदा, भक्तिरत,विगतसंशय,मुरारी ॥ १ ॥

असुर,सुर,नाग,नर,यक्ष,गंधर्व,खग,रजनिचर,सिद्ध,ये चापि अन्ने।
संत-संसर्ग त्रेवर्गपर,परमपद,प्राप्य निप्राप्यगति त्वयि प्रसन्ने ॥ २ ॥

वृत्र,बलि,बाण,प्रहलाद,मय,व्याध,गज,गृध्र,द्विजबन्धु निजधर्मत्यागी।
साधुपद-सलिल-निर्धूत-कल्मष सकल,श्वपच-यवनादि कैवल्य-भागी ॥ ३ ॥

शांत,निरपेक्ष,निर्मम,निरामय,अगुण,शब्दब्रह्मैकपर,ब्रह्मज्ञानी।

दक्ष,समदृक,स्वदृक,विगत अति स्वपरमति,परमरतिविरति तव चक्रपानी ॥ ४ ॥

विश्व-उपकारहित व्यग्रचित सर्वदा,त्यक्तमदमन्यु,कृत पुण्यरासी।
यत्र तिष्ठन्ति,तत्रेव अज शर्व हरि सहित गच्छन्ति क्षीराब्धिवासी ॥ ५ ॥

वेद-पयसिंधु,सुविचार मंदरमहा, अखिल-मुनिवृंद निमर्थनकर्ता।
सार सतसंगमुद् धृत्य इति निश्चितं वदति श्रीकृष्ण वैदर्भिभर्ता ॥ ६ ॥

शोक-संदेह,भय-हर्ष,तम-तर्षगण,साधु-सद्युक्ति विच्छेदकारी।
यथा रघुनाथ-सायक निशाचर-चमू-निचय-निर्दलन-पटु-वेग-भारी ॥ ७ ॥

यत्र कुत्रापि मम जन्म निजकर्मवश भ्रमत जगजोनि संकट अनेकं।
तत्र त्वद्भक्ति,सज्जन-समागम, सदा भवतु मे राम विश्राममेकं ॥ ८ ॥

प्रबल भव-जनित त्रैव्याधि-भैषज भगति, भक्त भैषज्यमद्वैतदरसी।
संत-भगवंत अंतर निरंतर नहीं, किमपि मति मलिन कह दासतुलसी ॥ ९ ॥

५८

देव–
देहि अवलंब कर कमल,कमलारमन,दमन-दुख,शमन-संताप भारी।
अज्ञान-राकेश-ग्रासन विंधुतुद,गर्व-काम-करिमत्त-हरि,दूषणारी ॥ १ ॥

वपुष ब्रह्माण्ड सुप्रवृत्ति लंका-दुर्ग, रचित मन दनुज मय-रूपधारी।
विविध कोशौघ, अति रुचिर-मंदिर-निकर,सत्वगुण प्रमुख त्रेकटककारी ॥ २ ॥

कुणप-अभिमान सागर भंयकर घोर, विपुल अवगाह,दुस्तर अपारं।
नक्र रागादि-संकुल मनोरथ सकल, संग-संकल्प वीची-विकारं ॥ ३ ॥

मोह दशमौलि, तद्भ्रात अहँकार, पाकारिजित काम विश्रामहारी।
लोभ अतिकाय,मत्सर महोदर दुष्ट,क्रोध पापिष्ठ-विबुधांतकारी ॥ ४ ॥

द्वेष दुर्मुख,दंभ खर अकंपन कपट, दर्प मनुजाद मद शूलपानी।
अमितबल परम दुर्जय निशाचर-निकर सहित षडवर्ग गो-यातुधानी ॥ ५ ॥

जीव भवदंघ्रि-सेवक विभीषण बसत मध्य दुष्टाटवी ग्रसितचिंता।
नियम-यम-सकल सुरलोक-लोकेश लंकेश-वश नाथ! अत्यंत भीता ॥ ६ ॥

ज्ञान-अवधेश-गृह गेहिनी भक्ति शुभ,तत्र अवतार भूभार-हर्ता।
भक्त-संकष्ट अवलोकि पितु-वाक्य कृत गमन किय गहन वैदेहि-भर्ता ॥ ७ ॥

कैवल्य-साधन अखिल भालु मर्कट विपुल ज्ञान-सुग्रीवकृत जलधिसेतू।
प्रबल वैराग्य दारुण प्रभंजन-तनय, विषय वन भवनमिव धूमकेतू ॥ ८ ॥

दुष्ट दनुजेश निर्वशकृत दासहित, विश्वदुख-हरण बोधैकरासी।
अनुज निज जानकी सहित हरि सर्वदा दासतुलसी हृदय कमलवासी ॥ ९ ॥

५९

देव–
दीन-उद्धरण रघुवर्य करुणाभवन शमन-संताप पापौघहारी।
विमल विज्ञान-विग्रह,अनुग्रहरूप,भूपवर, विबुध,नर्मद,खरारी ॥ १ ॥

संसार-कांतार अति घोर,गंभीर,घन,गहन तरुकर्मसंकुल,मुरारी।
वासना वल्लि खर-कंटकाकुल विपुल, निबिड़ विटपाटवी कठिन भारी ॥ २ ॥

विविध चितवृति-खग निकर श्येनोलूक,काक वक गृध्र आमिष-अहारी।
अखिल खल,निपुण छल,छिद्र निरखत सदा, जीवजनपथिकमन-खेदकारी ॥ ३ ॥

क्रोध करिमत्त,मृगराज,कंदर्प,मद-दर्प वृक-भालु अति उग्रकर्मा।
महिष मत्सर क्रूर,लोभ शूकररूप,फेरु छल,दंभ मार्जारधर्मा ॥ ४ ॥

कपट मर्कट विकट,व्याघ्र पाखण्डमुख,दुखद मृगव्रात,उत्पातकर्ता।
हृदय अवलोकि यह शोक शरणागतं,पाहि मां पाहि भो विश्वभर्ता ॥ ५ ॥

प्रबल अहँकार दुरघट महीधर,महामोह गिरि-गुहा निबिड़ांधकारं।
चित्त वेताल,मनुजाद मन,प्रेतगनरोग,भोगौघ वृश्चिक-विकारं ॥ ६ ॥

विषय-सुख-लालसा दंश-मशकादि,खल झिल्लि रूपादि सब सर्प,स्वामी।
तत्र आक्षिप्त तव विषम माया नाथ,अंध मैं मंद,व्यालादगामी ॥ ७ ॥

घोर अवगाह भव आपगा पापजलपूर,दुष्प्रेक्ष्य,दुस्तर,अपारा।
मकर षड्वर्ग,गो नक्र चक्राकुला,कूल शुभ-अशुभ,दुख तीव्र धारा ॥ ८ ॥

सकल संघट पोच शोचवश सर्वदा दासतुलसी विषम गहनग्रस्तं।
त्राहि रघुवंशभूषण कृपा कर,कठिन काल विकराल-कलित्रास-त्रस्तं ॥ ९ ॥

६०

देव–
नौमि नारायणं नरं करुणायनं, ध्यान-पारायणं,ज्ञान-मूलं।
अखिल संसार-उपकार-कारण, सदयहृदय,तपनिरत,प्रणतानुकूलं ॥ १ ॥

श्याम नव तामरस-दामद्युति वपुष, छवि कोटि मदनार्क अगणित प्रकाशं।
तरुण रमणीय राजीव-लोचन ललित, वदन राकेश,कर-निकस-हासं ॥ २ ॥

सकल सौंदर्य-निधि,विपुल गुणधाम, विधि-वेद-बुध-शंभु-सेवित,अमानं।
अरुण पदकंज-मकरंद मंदाकिनी मधुप-मुनिवृंद कुर्वन्ति पानं ॥ ३ ॥

शक्र-प्रेरित घोर मदन मद-भृगंकृत, क्रोधगत,बोधरत,ब्रह्मचारी।
मार्केण्डय मुनिवर्यहित कौतुकी बिनहि कल्पांत प्रभु प्रलयकारी ॥ ४ ॥

पुण्य वन शैलसरि बद्रिकाश्रम सदासीन पद्मासनं,एक रूपं।
सिद्ध-योगीन्द्र-वृंदारकानंदप्रद,भद्रदायक दरस अति अनूपं ॥ ५ ॥

मान मनभंग,चितभंग,मद,क्रोधा लोभादि पर्वतदुर्ग,भुवन-भर्त्ता।
द्वेष-मत्सर-राग प्रबल प्रत्यूह प्रति,भूरि निर्दय,क्रूर कर्म कर्त्ता ॥ ६ ॥

विकटतर वक्र क्षुरधार प्रमदा,तीव्र दर्प कंदर्प खर खड्गधारा।
धीर-गंभीर-मन-पीर-कारक,तत्र के वराका वयं विगतसारा ॥ ७ ॥

परम दुर्घट पथं खल-असंगत साथ,नाथ! नहिं हाथ वर विरति-यष्टी।
दर्शनारत दास,त्रसित माया-पाश,त्राहि हरि,त्राहि हरि,दास कष्टी ॥ ८ ॥

दासतुलसी दीन धर्म-संबलहीन,श्रमित अति,खेद,मति मोह नाशी।
देहि अवलंब न विलंब अंभोज-कर,चक्रधर-तेजबल शर्मराशी ॥ ९ ॥

६१

देव–
सकल सुखकंद, आनंदवन-पुण्यकृत,बिंदुमाधव द्वंद्व-विपतिहारी।
यस्यांघ्रिपाथोज अज-शंभु-सनकादि-शुक-शेष-मुनिवृंद-अलि-निलयकारी ॥ १ ॥

अमल मरकत श्याम,काम शतकोटि छवि,पीतपट तड़ित इव जलदनीलं।
अरुण शतपत्र लोचन,विलोकनि चारू,प्रणतजन-सुखद,करुणार्द्रशीलं ॥ २ ॥

काल-गजराज-मृगराज,दनुजेश-वन-दहन पावक,मोह-निशि-दिनेशं।
चारिभुज चक्र-कौमोदकी-जलज-दर, सरसिजोपरि यथा राजहंस ॥ ३ ॥

मुकुट,कुंडल,तिलक,अलक अलिव्रातइव,भृकुटि,द्विज,अधरवर,चारुनासा।
रुचिर सुकपोल,दर ग्रीव सुखसीव,हरि,इंदुकर-कुंदमिव मधुरहासा ॥ ४ ॥

उरसि वनमाल सुविशाल नवमंजरी, भ्राज श्रीवत्स-लांछन उदारं।

परम ब्रह्मन्य,अतिधन्य,गतमन्यु,अज,अमितबल,विपुल महिमा अपारं ॥ ५ ॥

हार-केयूर,कर कनक कंकन रतन-जटित मणि-मेखला कटिप्रदेशं।
युगल पद नूपुरामुखर कलहंसवत, सुभग सर्वांग सौन्दर्य वेशं ॥ ६ ॥

सकल सौभाग्य-संयुक्त त्रेलोक्य-श्री दक्षि दिशि रुचिर वारीश-कन्या।
बसत विबुधापगा निकट तट सदनवर, नयन निरखंति नर तेऽति धन्या ॥ ७ ॥

अखिल मंगल-भवन,निबिड़ संशय-शमन दमन-वृजिनाटवी,कष्टहर्त्ता।
विश्वधृत,विश्वहित,अजित,गोतीत,शिव,विश्वपालन,हरण,विश्वकर्त्ता ॥ ८ ॥

ज्ञान-विज्ञान-वैराग्य-ऐश्वर्य-निधि,सिद्धि अणिमादि दे भूरिदानं।
ग्रसित-भव-व्याल अतित्रास तुलसीदास,त्राहि श्रीराम उरगारि-यानं ॥ ९ ॥

६२

इहै परम फलु,परम बड़ाई।
नखसिख रुचिर बिंदुमाधव छबि निरखहिं नयन अघाई ॥ १ ॥

बिसद किसोर पीन सुंदर बपु,श्याम सुरुचि अधिकाई।
नीलकंज,बारिद,तमाल,मनि,इन्ह तनुते दुति पाई ॥ २ ॥

मृदुल चरन शुभ चिन्ह,पदज,नख अति अभूत उपमाई।
अरुन नील पाथोज प्रसव जनु, मनिजुत दल-समुदाई ॥ ३ ॥

जातरूप मनि-जटित-मनोहर, नूपुर जन-सुखदाई।
जनु हर-उर हरि बिबिध रूप धरि, रहे बर भवन बनाई ॥ ४ ॥

कटितट रटति चारु किंकिनि-रव,अनुपम,बरनि न जाई।
हेम जलज कल कलित मध्य जनु,मधुकर मुखर सुहाई ॥ ५ ॥

उर बिसाल भृगुचरन चारु अति,सूचत कोमलताई।
कंकन चारु बिबिध भूषन बिधि,रचि निज कर मन लाई ॥ ६ ॥

गज-मनिमाल बीच भ्राजत कहि जाति न पदक निकाई।
जनु उडुगन-मंडल बारिदपर,नवग्रह रची अथाई ॥ ७ ॥

भुजगभोग-भुजदंड कंज दर चक्र गदा बनि आई।
सोभासीव ग्रीव,चिबुकाधर,बदन अमित छबि छाई ॥ ८ ॥

कुलिस,कुंद-कुडमल,दामिनि-दुति,दसनन देखि लजाई।

नासा-नयन-कपोल,ललित श्रुति कुंडल भ्रू मोहि भाई ॥ ९ ॥

कुंचित कच सिर मुकुट,भाल पर,तिलक कहौं समुझाई।
अलप तड़ित जुग रेख इंदु महँ,रहि तजि चंचलताई ॥ १० ॥

निरमल पीत दुकुल अनूपम,उपमा हिय न समाई।
बहु मनिजुत गिरि नील सिखरपर कनक-बसन रुचिराई ॥ ११ ॥

दच्छ भाग अनुराग-सहित इंदिरा अधिक ललिताई।
हेमलता जनु तरु तमाल ढिग,नील निचोल ओढ़ाई ॥ १२ ॥

सत सारदा सेष श्रुति मिलिकै,सोभा कहि न सिराई।
तुलसिदास मतिमंद द्वंदरत कहै कौन बिधि गाई ॥ १३ ॥

राग जैतश्री

६३

मन इतनोई या तनुको परम फलु।
सब अँग सुभग बिंदुमाधव-छबि,तजि सुभाव,अवलोकु एक पलु ॥ १ ॥

तरुन अरुन अंभोज चरन मृदु,नख-दुति हृदय-तिमिर-हारी।
कुलिस-केतु-जव-जलज रेख बर,अंकुस मन-गज-बसकारी ॥ २ ॥

कनक-जटित मनि नूपुर,मेखल,कटि-तट रटति मधुर बानी।
त्रिबली उदर,गँभीर नाभि सर,जहँ उपजे बिरंचि ग्यानी ॥ ३ ॥

उर बनमाल,पदिक अति सोभित,बिप्र-चरन चित कहँ करषै।
स्याम तामरस-दाम-बरन बपु पीत बसन सोभा बरषै ॥ ४ ॥

कर कंकन केयूर मनोहर,देति मोद मुद्रिक न्यारी।
गदा कंज दर चारु चक्रधर,नाग-सुंड-सम भुज चारी ॥ ५ ॥

कंबुग्रीव,छबिसीव चिबुक द्विज,अधर अरुन,उन्नत नासा।
नव राजीव नयन,ससि आनन,सेवक-सुखद बिसद हासा ॥ ६ ॥

रुचिर कपोल,श्रवन कुंडल,सिर मुकुट,सुतिलक भाल भ्राजै।
ललित भृकुटि,सुंदर चितवनि,कच निरखि मधुप-अवली लाजे ॥ ७ ॥

रूप-सील-गुन-खानि दच्छ दिसि,सिंधु-सुता रत-पद-सेवा।
जाकी कृपा-कटाच्छ चहत सिव,बिधि,मुनि,मनुज,दनुज,देवा ॥ ८ ॥

तुलसिदास भव-त्रास मिटै तब,जब मति येहि सरूप अटकै।
नाहिंत दीन मलीन हीनसुख,कोटि जनम भ्रमि भ्रमि भटकै ॥ ९ ॥

राग बसन्त

६४

बंदौ रघुपति करुना-निधान। जाते छूटै भव-भेद-ग्यान ॥ १ ॥

रघुबंस-कुमुद-सुखप्रद निसेस। सेवत पद-पंकज अज महेस ॥ २ ॥

निज भक्त-ह्रदय-पाथोज-भृंग। लावन्य बपुष अगनित अनंग ॥ ३ ॥

अति प्रबल मोह-तम-मारतंड। अग्यान-गहन-पावक प्रचंड ॥ ४ ॥

अभिमान-सिंधु-कुंभज उदार। सुररंजन,भंजन भूमिभार ॥ ५ ॥

रागादि-सर्पगन-पन्नगारि। कंदर्प-नाग-मृगपति,मुरारि ॥ ६ ॥

भव-जलधि-पोत चरनारबिंद। जानकी-रवन आनंद-कंद ॥ ७ ॥

हनुमंत-प्रेम-बापी-मराल। निष्काम कामधुक गो दयाल ॥ ८ ॥

त्रेलोक-तिलक,गुनगहन राम। कह तुलसिदास बिश्राम-धाम ॥ ९ ॥

राग भैरव

६५

राम राम रमु,राम राम रटु, राम राम जपु जीहा।
रामनाम-नवनेह-मेहको,मन! हठि होहि पपीहा ॥ १ ॥

सब साधन-फल कूप-सरित-सर,सागर-सलिल-निरासा।
रामनाम-रति-स्वाति-सुधा-सुभ-सीकर प्रेमपियासा ॥ २ ॥

गरजि,तरजि,पाषान बरषि पवि,प्रीति परखि जिय जानै।
अधिक अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति पहिचानै ॥ ३ ॥

रामनाम-गति, रामनाम-मति, राम-नाम-अनुरागी।
ल्है गये,है,जे होहिंगे, तेइ त्रिभुवन गनियत बड़भागी ॥ ४ ॥

एक अंग मग अगमु गवन कर, बिलमु न छिन छिन छाहैं।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि,निरुपधि नेम निबाहैं ॥ ५ ॥

६६

राम जपु,राम जपु, राम जपु बावरे।
घोर भव-नीर-निधि नाम निज नाव रे ॥ १ ॥

एक ही साधन सब रिद्धि-सिद्धि साधि रे।
ग्रसे कलि-रोग जोग-संजम-समाधि रे ॥ २ ॥

भलो जो है,पोच जो है,दाहिनो जो,बाम रे।
राम-नाम ही सों अंत सब ही को काम रे ॥ ३ ॥

जग नभ-बाटिका रही है फलि फूलि रे।
धुवाँ कैसे धौरहर देखि तू न भूलि रे ॥ ४ ॥

राम-नाम छाड़ि जो भरोसो करै और रे।
तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर रे ॥ ५ ॥

६७

राम राम जपु जिय सदा सानुराग रे।
कलि न बिराग,जोग,जाग,तप,त्याग रे ॥ १ ॥

राम सुमिरत सब बिधि ही को राज रे।
रामको बिसारिबो निषेध-सिरताज रे ॥ २ ॥

राम-नाम महामनि,फनि जगजाल रे।
मनि लिये,फनि जियै,ब्याकुल बिहाल रे ॥ ३ ॥

राम-नाम कामतरु देत फल चारि रे।
कहत पुरान,बेद,पंडित,पुरारि रे ॥ ४ ॥

राम-नाम प्रेम-परमारथको सार रे।
राम-नाम तुलसीको जीवन-अधार रे ॥ ५ ॥

६८

राम राम राम जीह जौलौं तू न जपिहै।
तौलौं,तू कहूँ जाय, तिहूँ ताप तपिहै ॥ १ ॥

सुरसरि-तीर बिनु नीर दुख पाइहै।
सुरतरु तरे तोहि दारिद सताइहै ॥ २ ॥

जागत,बागत सपने न सुख सोइहै।

जनम जनम,जुग जुग जग रोइहै ॥ ३ ॥

छूटिबेके जतन बिसेष बाँधो जायगो।
ह्वैहै बिष भोजन जो सुधा-सानि खायगो ॥ ४ ॥

तुलसी तिलोक,तिहूँ काल तोसे दीनको।
रामनाम ही की गति जैसे जल मीनको ॥ ५ ॥

६९

सुमिरु सनेहसों तू नाम रामरायको।
संबल निसंबलको,सखा असहायको ॥ १ ॥

भाग है अभागेहूको,गुन गुनहीनको।
गाहक गरीबको,दयालु दानि दीनको ॥ २ ॥

कुल अकुलीनको,सुन्यो है बेद साखि है।
पाँगुरेको हाथ-पाँय,आँधरेको आँखि है ॥ ३ ॥

माय-बाप भूखेको, अधार निराधारको।
सेतु भव-सागरको, हेतु सुखसारको ॥ ४ ॥

पतितपावन राम-नाम सो न दूसरो।
सुमिरि सुभूमि भयो तुलसी सो ऊसरो ॥ ५ ॥

û ७०

भलो भली भाँति है जो मेरे कहे लागिहै।
मन राम-नामसों सुभाय अनुरागिहै ॥ १ ॥

राम-नामको प्रभाउ जानि जूड़ी आगिहै।
सहित सहाय कलिकाल भीरु भागिहै ॥ २ ॥

राम-नामसों बिराग,जोग,जप जागिहै।
बाम बिधि भाल हू न करम दाग दागिहै ॥ ३ ॥

राम-नाम मोदक सनेह सुधा पागिहै।
पाइ परितोष तू न द्वार द्वार बागिहै ॥ ४ ॥

राम-नाम काम-तरु जोइ जोइ माँगिहै।
तुलसिदास स्वारथ परमारथ न खाँगिहै ॥ ५ ॥

७१

ऐसेहू साहबकी सेवा सों होत चोरु रे।
आपनी न बुझ, न कहै को राँडरोरु रे ॥ १ ॥

मुनि-मन-अगम,सुगम माइ-बापु सों।
कृपासिंधु,सहज सखा, सनेही आपु सों ॥ २ ॥

लोक-बेद-बिदित बड़ो न रघुनाथ सों।
सब दिन दब देस, सबहिके साथ सों ॥ ३ ॥

स्वामी सरबग्य सों चलै न चोरी चारकी।
प्रीति पहिचानि यह रीति दरबारकी ॥ ४ ॥

काय न कलेस-लेस, लेत मान मनकी।
सुमिरे सकुचि रुचि जोगवत जनकी ॥ ५ ॥

रीझे बस होत,खीझे देत निज धाम रे।
फलत सकल फल कामतरु नाम रे ॥ ६ ॥

बेंचे खोटो दाम न मिलै, न राखे काम रे।
सोऊ तुलसी निवाज्यो ऐसो राजाराम रे ॥ ७ ॥

७२

मेरो भलो कियो राम आपनी भलाई।
हौं तो साई-द्रोही पै सेवक-हित साई ॥ १ ॥

रामसों बड़ो है कौन, मोसों कौन छोटो।
राम सो खरो है कौन, मोसों कौन खोटो ॥ २ ॥

लोक कहै रामको गुलाम हौं कहावौं।
एतो बड़ो अपराध भौ न मन बावौं ॥ ३ ॥

पाथ माथे चढ़े तृन तुलसी ज्यों नीचो।
बोरत न बारि ताहि जानि आपु सीचो ॥ ४ ॥

७३

जागु,जागु,जीव जड़! जोहै जग-जामिनी।
देह-गेह-नेह जानि जैसे घन-दामिनी ॥ १ ॥

सोवत सपनेहूँ सहै संसृति-संताप रे।
बूड्यो मृग-बारि खायो जेवरीको साँप रे ॥ २ ॥

कहैं बेद-बुध,तू तो बूझि मनमाहिं रे।
दोष-दुख सपनेके जागे ही पै जाहिं रे ॥ ३ ॥

तुलसी जागेते जाय ताप तिहुँ ताय रे।
राम-नाम सुचि रुचि सहज सुभाय रे ॥ ४ ॥

राग विभास

७४

जानकीसकी कृपा जगावती सुजान जीव,
जागी त्यागि मूढताऽनुरागु श्रीहरे।
करि बिचार,तजि बिकार,भजु उदार रामचंद्र,
भद्रसिंधु दीनबंधु, बेद बदत रे ॥ १ ॥

मोहमय कुहू-निसा बिसाल काल बिपुल सोयो,
खोयो सो अनूप रूप सुपन जू परे।
अब प्रभात प्रगट ग्यान-भानुके प्रकाश,
बासना,सराग मोह-द्वेष निबिड तम टरे ॥ २ ॥

भागे मद-मान चोर भोर जानि जातुधान,
काम-कोह-लोभ-छोभ-निकर अपडरे।
देखत रघुबर-प्रताप, बीते संताप-पाप,
ताप त्रिबिध प्रेम-आप दूर ही करे ॥ ३ ॥

श्रवन सुनि गिरा गँभीर, जागे अति धीर बीर,
बर बिराग-तोष सकल संत आदरे।
तुलसिदास प्रभुकृपालु, निरखि जीव जन बिहालु,
भंज्यो भव-जाल परम मंगलाचरे ॥ ४ ॥

राग ललित

७५

खोटो खरो रावरो हौं,रावरी सौं, रावरेसों झूठ क्यों कहौंगो,
जानो सब ही के मनकी।
करम-बचन-हिये,कहौं न कपट किये, ऐसी हठ जैसी गाँठि

पानी परे सनकी ॥ १ ॥

दूसरो,भरोसो नाहिं बासना उपासनाकी, बासव,बिरंचि
सुर-नर-मुनिगनकी।
स्वारथ के साथी मेरे,हाथी स्वान लेवा देई,काहू तो न पीर
रघुबीर! दीन जनकी ॥ २ ॥

साँप-सभा साबर लबार भये देव दिब्य,दुसह साँसति कीजै
आगे ही या तनकी।
साँचे परौं,पाँऊ पान,पंचमें पन प्रमान,तुलसी चातक आस
राम स्यामघनकी ॥ ३ ॥

७६

रामको गुलाम,नाम रामबोला राख्यौ राम,
काम यहै, नाम द्वै हौ कबहूँ कहत हौं।
रोटी-लूगा नीके राखै,आगेहूकी बेद भाखै,
भलो ह्वैहै तेरो,ताते आनँद लहत हौं ॥ १ ॥

बाँध्यौ हौं करम जड़ गरब गूढ़ निगड़,
सुनत दुसह हौं तौ साँसति सहत हौं।
आरत-अनाथ-नाथ,कौसलपाल कृपाल,
लीन्हौ छीन दीन देख्यो दुरित दहत हौं ॥ २ ॥

बूझ्यौ ज्यौं ही,कह्यो,मैं हूँ चेरो ह्वैहौ रावरो जू
मेरो कोऊ कहूँ नाहिं, चरन गहत हौं।
मींजो गुरु पीठ,अपनाइ गहि बाँह,बोलि
सेवक-सुखद,सदा बिरद बहत हौं ॥ ३ ॥

लोग कहै पोच,सो न सोच न सँकोच मेरे
ब्याह न बरेखी,जाति-पाँति न चहत हौं।
तुलसी अकाज-काज राम ही के रीझे-खीझे,
प्रीतिकी प्रतीति मन मुदित रहत हौं ॥ ४ ॥

७७

जानकी-जीवन,जग-जीवन,जगत-हित,
जगदीस,रघुनाथ,राजीवलोचन राम।

सरद-बिधु-बदन,सुखसील,श्रीसदन,
सहज सुंदर तनु,सोभा अगनित काम ॥ १ ॥

जग-सुपिता,सुमातु,सुगुरु,सुहित,सुमीत,
सबको दाहिनो,दीनबन्धु,काहुको न बाम।
आरतिहरन,सरनद,अतुलित दानि,
प्रनतपालु,कृपालु,पतित-पावन नाम ॥ २ ॥

सकल बिस्व-बंदित,सकल सुर-सेवित,
आगम-निगम कहैं रावरेई गुनग्राम।
इहै जानि तुलसी तिहारो जन भयो,
न्यारो कै गनिबो जहाँ गने गरीब गुलाम ॥ ३ ॥

राग टोडी

७८

देव-
दीनको दयालु दानि दूसरो न कोऊ।
जाहि दीनता कहौं हौं देखौं दीन सोऊ ॥ १ ॥

सुर,नर,मुनि,असुर,नाग,साहिब तौ घनेरे।
(पै) तौ लौं जौं लौं रावरे न नेकु नयन फेरे ॥ २ ॥

त्रिभुवन,तिहुँ काल बिदित,बेद बदति चारी।
आदि-अंत-मध्य राम! साहबी तिहारी ॥ ३ ॥

तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो।
सुनि सुभाव-सील-सुजसु जाचन जन आयो ॥ ४ ॥

पाहन-पसु, बिटप-बिहँग अपने करि लीन्हे।
महाराज दसरथके ! रंक राय कीन्हे ॥ ५ ॥

तू गरीबको निवाज, हौं गरीब तेरो।
बारक कहिये कृपालु! तुलसिदास मेरो ॥ ६ ॥

७९

देव-
तू दयालु ,दीन हौं तू दानि, हौं भिखारी।

हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज-हारी ॥ १ ॥

नाथ तू अनाथको, अनाथ कौन मोसो
मो समान आरत नहिं, आरतिहर तोसो ॥ २ ॥

ब्रह्म तू, हौं जीव, तू है ठाकुर,हौं चेरो।
तात-मात,गुरु-सखा, तू सब बिधि हितु मेरो ॥ ३ ॥

तोहिं मोहिं नाते अनेक, मानियै जो भावै।
ज्यों त्यों, तुलसी कृपालु ! चरन-सरन पावै ॥ ४ ॥

८०

देव–
और काहि माँगिये, को माँगिबो निवारै।
अभिमतदातार कौन, दुख-दरिद्र दारै ॥ १ ॥

धरमधाम राम काम-कोटि-रूप रूरो।
साहब सब बिधि सुजान, दान-खडग-सूरो ॥ २ ॥

सुसमय दिन द्वै निसान सबके द्रार बाजै।
कुसमय दसरथके ! दानि तैं गरीब निवाजै ॥ ३ ॥

सेवा बिनु गुनबिहीन दीनता सुनाये।
जे जे तैं निहाल किये फूले फिरत पाये ॥ ४ ॥

तुलसीदास जाचक-रुचि जानि दान दीजै।
रामचंद्र चंद्र तू, चकोर मोहिं कीजै ॥ ५ ॥

८१

दीनबंधु, सुखसिंधु, कृपाकर, कारुनीक रघुराई।
सुनहु नाथ ! मन जरत त्रिबिध जुर, करत फिरत बौराई ॥ १ ॥

कबहुँ जोगरत, भोग-निरत सठ हठ बियोग-बस होई।
कबहुँ मोहबस द्रोह करत बहु, कबहुँ दया अति सोई ॥ २ ॥

कबहुँ दीन,मतिहीन, रंकतर,कबहुँ भूप अभिमानी।
कबहुँ मूढ, पंडित बिडंबरत,कबहुँ धर्मरत ग्यानी ॥ ३ ॥

कबहुँ देव! जग धनमय रिपुमय कबहुँ नारिमय भासै।

संसृति-संनिपात दारुन दुख बिनु हरि-कृपा न नासै ॥ ४ ॥

संजम,जप,तप,नेम,धरम, ब्रत,बहु भेषज-समुदाई।
तुलसिदास भव-रोग रामपद-प्रेम-हीन नहिं जाई ॥ ५ ॥

८२

मोहजनित मल लाग बिबिध बिधि कोटिहु जतन न जाई।
जनम जनम अभ्यास-निरत चित, अधिक अधिक लपटाई ॥ १ ॥

नयन मलिन परनारि निरखि,मन मलिन बिषय सँग लागे।
हृदय मलिन बासना-मान मद, जीव सहज सुख त्यागे ॥ २ ॥

परनिंदा सुनि श्रवन मलिन भे, बचन दोष पर गाये।
सब प्रकार मलभार लाग निज नाथ-चरन बिसराये ॥ ३ ॥

तुलसिदास ब्रत-दान, ग्यान-तप, सुद्धिहेतु श्रुति गावै।
राम-चरन-अनुराग-नीर बिनु मल अति नास न पावै ॥ ४ ॥

राग जैतश्री

८३

कछु ह्वै न आई गयो जनम जाय।
अति दुरलभ तनु पाइ कपट तजि भजे न राम मन बचन- काय ॥ १ ॥

लरिकाई बीती अचेत चित, चंचलता चौगुने चाय।
जोबन-जुर जुबती कुपथ्य करि, भयो त्रिदोष भरि मदन बाय ॥ २ ॥

मध्य बयस धन हेतु गँवाई, कृषी बनिज नाना उपाय।
राम-बिमुख सुख लह्यो न सपनेहुँ, निसिबासर तयौ तिहूँ ताय ॥ ३ ॥

सेये नहिं सीतापति-सेवक, साधु सुमति भलि भगति भाय।
सुने न पुलकि तनु, कहे न मुदित मन किये जे चरित रघुबंसराय ॥ ४ ॥

अब सोचत मनि बिनु भुअंग ज्यो, बिकल अंग दले जरा धाय।
सिर धुनि-धुनि पछिताय मींजि कर कोउ न मीत हित दुसह दाय ॥ ५ ॥

जिन्ह लगि निज परलोक बिगार् यौ, ते लजात होत ठाढ़े ठाँय।
तुलसी अजहुँ सुमिरि रघुनाथहिं,तर् यौ गयँद जाके एक नाँय ॥ ६ ॥

८४

तौ तू पछितैहै मन मींजि हाथ।
भयो है सुगम तोको अमर-अगम तन,समुझिधौं कत खोवत अकाथ ॥ १ ॥

सुख-साधन हरिबिमुख बृथा जैसे श्रम फल घृतहित मथे पाथ।
यह बिचारि, तजि कुपथ-कुसंगति चलि सुपंथ मिलि भले साथ ॥ २ ॥

देखु-राम-सेवक, सुनि कीरति, रटहि नाम करि गान गाथ।
हृदय आनु धनुबान-पानि प्रभु,लसे मुनिपट, कटि कसे भाथ ॥ ३ ॥

तुलसिदास परिहरि प्रपंच सब, नाउ रामपद-कमल माथ।
जनि डरपहि तोसे अनेक खल, अपनाये जानकीनाथ ॥ ४ ॥

राग धनाश्री

८५

मन! माधवको नेकु निहारहि।
सुनु सठ, सदा रंकके धन ज्यो,छिन-छिन प्रभुहिं सँभारहि ॥ १ ॥

सोभा-सील-ग्यान-गुन-मंदिर, सुंदर परम उदारहि।
रंजन संत, अखिल अघ-गंजन, भंजन बिषय-बिकारहि ॥ २ ॥

जो बिनु जोग-जग्य-ब्रत-संयम गयो चहै भव-पारहि।
तौ जनि तुलसिदास निसि- बासर हरि-पद कमल बिसारहि ॥ ३ ॥

८६

इहै कह्यो सुत! बेद चहूँ।
श्रीरघुबीर-चरन-चिंतन तजि नाहिन ठौर कहूँ ॥ १ ॥

जाके चरन बिरंचि सेइ सिधि पाई संकरहूँ।
सुक-सनकादि मुकुत बिचरत तेउ भजन करत अजहूँ ॥ २ ॥

जद्यपि परम चपल श्री संतत, थिर न रहति कतहूँ।
हरि-पद-पंकज पाइ अचल भइ,करम-बचन-मनहूँ ॥ ३ ॥

करुनासिंधु,भगत-चिंतामनि,सोभा सेवतहूँ।
और सकल सुर,असुर-ईस सब खाये उरग छहूँ ॥ ४ ॥

सुरुचि कह्यो सोइ सत्य तात अति परुष बचन जबहूँ।
तुलसिदास रघुनाथ-बिमुख नहिं मिटइ बिपति कबहूँ ॥ ५ ॥

८७

सुनु मन मूढ सिखावन मेरो।
हरि-पद-बिमुख लह्यो न काहु सुख सठ ! यह समुझ सबेरो ॥ १ ॥

बिछुरे ससि-रबि मन-नैननितें, पावत दुख बहुतेरो।
भ्रमत श्रमित निसि-दिवस गगन महँ,तहँ रिपु राहु बडेरो ॥ २ ॥

जद्यपि अति पुनित सुरसरिता, तिहुँ पुर सुजस घनेरो।
तजे चरन अजहूँ न मिटत नित,बहिबो ताहू केरो ॥ ३ ॥

छुटै न बिपति भजे बिनु रघुपति, श्रुति संदेहु निबेरो।
तुलसिदास सब आस छाँडि करि, होहु रामको चेरो ॥ ४ ॥

८८

कबहूँ मन बिश्राम न मान्यो।
निसिदिन भ्रमत बिसारि सहज सुख, जहँ तहँ इंद्रिन तान्यो ॥ १ ॥

जदपि बिषय-सँग सह्यो दुसह दुख, बिषम जाल अरुझान्यो।
तदपि न तजत मूढ ममताबस,जानतहूँ नहिं जान्यो ॥ २ ॥

जनम अनेक किये नाना बिधि करम-कीच चित सान्यो।
होइ न बिमल बिबेक-नीर बिनु, बेद पुरान बखान्यो ॥ ३ ॥

निज हित नाथ पिता गुरु हरिसों हरषि हदै नहि आन्यो।
तुलसिदास कब तृषा जाय सर खनतहि जनम सिरान्यो ॥ ४ ॥

८९

मेरो मन हरिजू! हठ न तजै।
निसिदिन नाथ देउँ सिख बहु बिधि, करत सुभाउ निजै ॥ १ ॥

ज्यो जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खल पतिहिं भजै ॥ २ ॥

लोलुप भ्रम गृहपसु ज्यौं जहँ तहँ सिर पदत्रान बजै।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुँ न मूढ लजै ॥ ३ ॥

हौं हार् यौ करि जतन बिबिध बिधि अतिसै प्रबल अजै।
तुलसिदास बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥ ४ ॥

९०

ऐसी मूढ़ता या मनकी।
परिहरि राम-भगति-सुरसरिता,आस करत ओसकनकी ॥ १ ॥

धूम-समूह निरखि चातक ज्यो, तृषित जानि मति घनकी।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचनकी ॥ २ ॥

ज्यो गच-काँच बिलोकि सेन जड छाँह आपने तनकी।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आननकी ॥ ३ ॥

कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि! जानत हौ गति जनकी।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पनकी ॥ ४ ॥

९१

नाचत ही निसि-दिवस मर् यो।
तब ही ते न भयो हरि थिर जबतें जिव नाम धर् यो ॥ १ ॥

बहु बासना बिबिध कंचुकि भूषन लोभादि भर् यो।
चर अरु अचर गगन जल थलमें,कौन न स्वाँग कर् यो ॥ २ ॥

देव-दनुज,मुनि,नाग,मनुज नहिं जाँचत कोउ उबर् यो।
मेरो दुसह दरिद्र, दोष,दुख काहू तौ न हर् यो ॥ ३ ॥

थके नयन, पद, पानि, सुमति, बल, संग सकल बिछुर् यो।
अब रघुनाथ सरन आयो जन,भव,भय बिकल डर् यो ॥ ४ ॥

जेहि गुनतें बस होहु रीझि करि, सो मोहि सब बिसर् यो।
तुलसिदास निज भवन-द्वार प्रभु दीजै रहन पर् यो ॥ ५ ॥

९२

माधवजू,मोसम मंद न कोऊ।
जद्यपि मीन-पतंग हीनमति, मोहि नहिं पूजैं ओऊ ॥ १ ॥

रुचिर रुप-आहार-बस्य उन्ह, पावक लोह न जान्यो।
देखत बिपति बिषय न तजत हौं, ताते अधिक अयान्यो ॥ २ ॥

महामोह-सरिता अपार महँ, संतत फिरत बह्यो।
श्रीहरि- चरन-कमल-नौका तजि,फिरि फिरि फेन गह्यो ॥ ३ ॥

अस्थि पुरातन छुधित स्वान अति ज्यौं भरि मुख पकरै।
निज तालूगत रुधिर पान करि,मन संतोष धरै ॥ ४ ॥

परम कठिन भव-ब्याल-ग्रसित भयो अति भारी।
चाहत अभय भेक सरनागत, खगपति-नाथ बिसारी ॥ ५ ॥

जलचर-बृंद जाल-अंतरगत होत सिमिटि इक पासा।
एकहि एक खात लालच-बस, नहिं देखत निज नासा ॥ ६ ॥

मेरे अघ सारद अनेक जुग, गनत पार नहिं पावै।
तुलसिदास पतित-पावन प्रभु यह भरोस जिय आवै ॥ ७ ॥

९३

कृपा सो धौं कहाँ बिसारी राम।
जेहि करुना सुनि श्रवन दीन-दुख, धावत हौ तजि धाम ॥ १ ॥

नागराज निज बल बिचारि हिय, हारि चरन चित दीन्हों।
आरत गिरा सुनत खगपति तजि, चलत बिलंब न कीन्हों ॥ २ ॥

दितिसुत-त्रास-त्रसित निसिदिन प्रहलाद-प्रतिग्या राखी।
अतुलित बल मृगराज-मनुज-तनु दनुज हत्यो श्रुति साखी ॥ ३ ॥

भूप-सदसि सब नृप बिलोकि प्रभु-राखु कह्यो नर- नारी।
बसन पूरि,अरि-दरप दूरि करि, भूरि कृपा दनुजारी ॥ ४ ॥

एक एक रिपुते त्रासित जन,तुम राखे रघुबीर।
अब मोहिं देत दुसह दुख बहु रिपु कस न हरहु भव-पीर ॥ ५ ॥

लोभ-ग्राह, दनुजेस-क्रोध, कुरुराज-बंधु खल मार।
तुलसिदास प्रभु यह दारुन दुख भंजहु राम उदार ॥ ६ ॥

९४

काहे ते हरि मोहिं बिसारो।
जानत निज महिमा मेरे अघ,तदपि न नाथ सँभारो ॥ १ ॥

पतित-पुनीत,दीनहित,असरन-सरन कहत श्रुति चारो।
हौं नहिं अधम,सभीत,दीन ? किधौं बेदन मृषा पुकारो ? ॥ २ ॥

खग-गनिका-गज-ब्याध-पाँति जहँ तहँ हौहूँ बैठारो।

अब केहि लाज कृपानिधान ! परसत पनवारो फारो ॥ ३ ॥

जो कलिकाल प्रबल अति होतो, तुव निदेसतें न्यारो।
तौ हरि रोष भरोस दोष गुन तेहि भजते तजि गारो ॥ ४ ॥

मसक बिरंचि,बिरंचि मसक सम, करहु प्रभाउ तुम्हारो।
यह सामरथ अछत मोहिं त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो ॥ ५ ॥

नाहिन नरक परत मोकहँ डर,जद्यपि हौं अति हारो।
यह बडि त्रास दासतुलसी प्रभु,नामहु पाप न जारो ॥ ६ ॥

९५

तरु न मेरे अघ-अवगुन गनिहैं ।
जौ जमराज काज सब परिहरि, इहै ख्याल उर अनिहैं ॥ १ ॥

चलिहैं छूटि पुंज पापिनके, असमंजस जिय जनिहैं ।
देखि खलल अधिकार प्रभूसों (मेरी) भूरि भलाई भनिहैं ॥ २ ॥

हँसि करिहैं परतीति भगतकी भगत-सिरोमनि मनिहैं ।
ज्यों त्यों तुलसिदास कोसलपति अपनायेहि पर बनिहैं ॥ ३ ॥

९६

जौ पै जिय धरिहौ अवगुन जनके ।
तौ क्यों कटत सुकृत-नखते मो पै, बिपुल बृंद अघ-बनके ॥ १ ॥

कहिहै कौन कलुष मेरे कृत, करम बचन अरु मनके ।
हारहिं अमित सेष सारद श्रुति, गिनत एक-एक छनके ॥ २ ॥

जो चित चढ़ै नाम-महिमा निज, गुनगन पावन पनके ।
तो तुलसिहिं तारिहौ बिप्र ज्यों दसन तोरि जमगनके ॥ ३ ॥

९७

जौ पै हरि जनके औगुन गहते ।
तौ सुरपति कुरुराज बालिसों, कत हठि बैर बिसहते ॥ १ ॥

जौ जप जाग जोग ब्रत बरजित, केवल प्रेम न चहते ।
तौ कत सुर मुनिबर बिहाय ब्रज, गोप-गेह बसि रहते ॥ २ ॥

जौ जहँ-तहँ प्रन राखि भगतको, भजन-प्रभाउ न कहते ।

तौ कलि कठिन करम-मारग जड हम केहि भाँति निबहते ॥ ३ ॥

जौ सुतहित लिये नाम अजामिलके अघ अमित न दहते ।
तौ जमभट साँसति-हर हमसे बृषभ खोजि खोजि नहते ॥ ४ ॥

जौ जगबिदित पतितपावन, अति बाँकुर बिरद न बहते ।
तौ बहुकलप कुटिल तुलसीसे, सपनेहुँ सुगति न लहते ॥ ५ ॥

९८

ऐसी हरि करत दासपर प्रीति ।
निज प्रभुता बिसारि जनके बस, होत सदा यह रीति ॥ १ ॥

जिन बाँधे सुर-असुर, नाग-नर, प्रबल करमकी डोरी ।
सोइ अबिछिन्न ब्रह्म जसुमति हठि बाँध्यो सकत न छोरी ॥ २ ॥

जाकी मायाबस बिरंचि सिव, नाचत पार न पायो ।
करतल ताल बजाय ग्वाल-जुवतिन्ह सोइ नाच नचायो ॥ ३ ॥

बिस्वंभर, श्रीपति, त्रिभुवनपति,बेद-बिदित यह लीख ।
बलिसों कछु न चली प्रभुता बरु है द्विज माँगी भीख ॥ ४ ॥

जाको नाम लिये छूटत भव-जनम-मरन दुख-भार ।
अंबरीष-हित लागि कृपानिधि सोइ जनमे दस बार ॥ ५ ॥

जोग-बिराग, ध्यान-जप-तप करि, जेहि खोजत मुनि ग्यानी ।
बानर-भालु चपल पसु पामर, नाथ तहाँ रति मानी ॥ ६ ॥

लोकपाल,जम,काल,पवन,रबि,ससि सब आग्याकारी ।
तुलसिदास प्रभु उग्रसेनके द्वार बेंत कर धारी ॥ ७ ॥

९९

बिरद गरीबनिवाज रामको ।
गावत बेद-पुरान, संभु-सुक, प्रगट प्रभाउ नामको ॥ १ ॥

ध्रुव,प्रहलाद,बिभीषन,कपिपति,जड,पतंग,पाडंव,सुदामको ।
लोक सुजस परलोक सुगति,इन्हमें को है राम कामको ॥ २ ॥

गनिका, कोल,किरात,आदिकबि इन्हते अधिक बाम को।
बाजिमेध कब कियो अजामिल, गज गायो कब सामको ॥ ३।

छली,मलीन,हीन सब ही अँग, तुलसी सो छीन छामको।
नाम-नरेस-प्रताप प्रबल जग, जुग-जुग चालत चामको ॥ ४ ॥

१००

सुनि सीतापति-सील-सुभाउ।
मोद न मन,तन पुलक,नयन जल,सो नर खेहर खाउ ॥ १ ॥

सिसुपनतें पितु,मातु,बंधु,गुरु,सेवक,सचिव,सखाउ।
कहत राम-बिधु-बदन रिसोहैं सपनेहुँ लख्यो न काउ ॥ २ ॥

खेलत संग अनुज बालक नित, जोगवत अनट अपाउ।
जीति हारि चुचुकारि दुलारत, देत दिवावत दाउ ॥ ३ ॥

सिला साप-संताप-बिगत भइ परसत पावन पाउ।
दई सुगति सो न हेरि हरष हिय, चरन छुएको पछिताउ ॥ ४ ॥

भव-धनु भंजि निदरि भूपति भृगुनाथ खाइ गये ताउ।
छमि अपराध, छमाइ पाँय परि, इतौ न अनत समाउ ॥ ५ ॥

कह्यो राज, बन दियो नारिबस, गरि गलानि गयो राउ।
ता कुमातुको मन जोगवत ज्यों निज तन मरम कुघाउ ॥ ६ ॥

कपि-सेवा-बस भये कनौड़े, कह्यौ पवनसुत आउ।
देबेको न कछु रिनियाँ हौं धनिक तूँ पत्र लिखाउ ॥ ७ ॥

अपनाये सुग्रीव बिभीषन, तिन न तज्यो छल-छाउ।
भरत सभा सनमानि,सराहत, होत न हृदय अघाउ ॥ ८ ॥

निज करुना करतूति भगत पर चपत चलत चरचाउ।
सकृत प्रनाम प्रनत जल बरनत, सुनत कहत फिरि गाउ ॥ ९ ॥

समुझि समुझि गुनग्राम रामके, उर अनुराग बढ़ाउ।
तुलसिदास अनयास रामपद पाइहै प्रेम-पसाउ ॥ १० ॥

१०१

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे।
काको नाम पतित-पावन जग, केहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥

कौने देव बराइ बिरद-हित, हठि हठि अधम उधारे।

खग,मृग,ब्याध,पषान,बिटप जड़, जवन कवन सुर तारे ॥ २ ॥

देव,दनुज,मुनि,नाग,मनुज सब, माया-बिवस बिचारे।
तिनके हाथ दासतुलसी प्रभु, कहा अपनपौ हारे ॥ ३ ॥

१०२

हरि! तुम बहुत अनुग्रह कीन्हो।
साधन-धाम बिबुध दुरलभ तनु, मोहि कृपा करि दीन्हों ॥ १ ॥

कोटिहुँ मुख कहि जात न प्रभुके, एक एक उपकार।
तदपि नाथ कछु और माँगिहौं, दीजै परम उदार ॥ २ ॥

बिषय-बारि मन-मीन भिन्न नहिं होत कबहुँ पल एक।
ताते सहौं बिपति अति दारुन, जनमत जोनि अनेक ॥ ३ ॥

कृपा-डोरि बनसी पद अंकुस, परम प्रेम-मृदु-चारो।
एहि बिधि बेधि हरहु मेरो दुख, कौतुक राम तिहारो ॥ ४ ॥

हैं श्रुति-बिदित उपाय सकल सुर, केहि केहि दीन निहोरै।
तुलसिदास येहि जीव मोह-रजु, जेहि बाँध्यो सोइ छोरै ॥ ५ ॥

१०३

यह बिनती रघुबीर गुसाई।
और आस-बिस्वास-भरोसो, हरो जीव-जड़ताई ॥ १ ॥

चहौं न सुगति,सुमति,संपति कछु, रिधि-सिधि बिपुल बड़ाई।
हेतु-रहित अनुराग राम-पद बढ़ै अनुदिन अधिकाई ॥ २ ॥

कुटिल करम लै जाहिं मोहि जहँ जहँ अपनी बरिआई।
तहँ तहँ जनि छिन छोह छाँड़ियो, कमठ-अंडकी नाई ॥ ३ ॥

या जगमें जहँ लगि या तनुकी प्रीति प्रतीति सगाई।
ते सब तुलसिदास प्रभु ही सों होहिं सिमिटि इक ठाई ॥ ४ ॥

१०४

जानकी-जीवनकी बलि जैहौं।
चित कहै रामसीय-पद परिहरि अब न कहूँ चलि जैहौं ॥ १ ॥

उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख, प्रभु-पद-बिमुख न पैहौं।

मन समेत या तनके बासिन्ह, इहै सिखावन दैहौं ॥ २ ॥

श्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं, रसना और न गैहौं।
रोकिहौं नयन बिलोकत औरहिं, सीस ईस ही नैहौं ॥ ३ ॥

नातो-नेह नाथसों करि सब नातो-नेह बहैहौं।
यह छर भार ताहि तुलसी जग जाको दास कहैहौं ॥ ४ ॥

१०५

अबलौ नसानी, अब न नसैहौं।
राम-कृपा भव-निसा सिरानी, जागे फिरि न डसैहौं ॥ १ ॥

पायेउँ नाम चारु चिंतामनि, उर कर तें न खसैहौं।
स्यामरूप सुचि रुचिर कसौटी, चित कंचनहिं कसैहौं ॥ २ ॥

परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन मधुकर पनकै तुलसी रघुपति-पद-कमल बसैहौं ॥ ३ ॥

राग रामकली

१०६

महाराज रामादर् यो धन्य सोई।
गरुअ,गुनरासि,सरबग्य,सुकृती,सूर,सील-निधि,साधु तेहि सम न कोई ॥ १ ॥

उपल,केवट,कीस,भालु,निसिचर,सबरि,गीध सम-दम-दया-दान-हीने।
नाम लिये राम किये परम पावन सकल, नर तरत तिनके गुनगान कीने ॥ २ ॥

ब्याध अपराधकी साध राखी कहा, पिंगलै कौन मति भगति भेई।
कौन धौं सोमजाजी अजामिल अधम, कौन गजराज धौं बाजपेयी ॥ ३ ॥

पांडु-सुत,गोपिका,बिदुर,कुबरी,सबरि,सुद्ध किये सुद्धता लेस कैसो।
प्रेम लखि कृस्न किये आपने तिनहुको, सुजस संसार हरिहरको जैसो ॥ ४ ॥

कोल,खस,भील,जवनादि खल राम कहि, नीच ह्वै ऊँच पद को न पायो।
दीन-दुख-दवन श्रीरवन करुना-भवन, पतित-पावन विरद बेद गायो ॥ ५ ॥

मंदमति,कुटिल,खल-तिलक तुलसी सरिस, भो न तिहुँ लोक तिहुँ काल कोऊ।
नामकी कानि पहिचानि पन आपनो, ग्रसित कलि-ब्याल राख्यो सरन सोऊ ॥ ६ ॥

बिहाग

राग ———

बिलावल

१०७

है नीको मेरो देवता कोसलपति राम।
सुभग सरोरुह लोचन, सुठि सुंदर स्याम ॥ १ ॥

सिय-समेत सोहत सदा छबि अमित अनंग।
भुज बिसाल सर धनु धरे, कटि चारु निषंग ॥ २ ॥

बलिलपूजा चाहत नहीं, चाहत एक प्रीति।
सुमिरत ही मानै भलो, पावन सब रीति ॥ ३ ॥

देहि सकल सुख,दुख दहै, आरत-जन-बंधु।
गुन गहि, अघ-औगुन हरै, अस करुनासिंधु ॥ ४ ॥

देस-काल-पूरन सदा बद बेद पुरान।
सबको प्रभु,सबमें बसै,सबकी गति जान ॥ ५ ॥

को करि कोटिक कामना, पूजै बहु देव।
तुलसिदास तेहि सेइये, संकर जेहि सेव ॥ ६ ॥

१०८

बीर महा अवराधिये, साधे सिधि होय।
सकल काम पूरन करै, जाने सब कोय ॥ १ ॥

बेगि,बिलंब न कीजिये लीजै उपदेस।
बीज महा मंत्र जपिये सोई, जो जपत महेस ॥ २ ॥

प्रेम-बारि-तरपन भलो, घृत सहज सनेहु।
संसय-समिध, अगिनि छमा, ममता-बलि देहु ॥ ३ ॥

अघ-उचाटि, मन बस करै, मारै मद मार।
आकरषै सुख-संपदा-संतोष-बिचार ॥ ४ ॥

जिन्ह यहि भाँति भजन कियो, मिले रघुपति ताहि।
तुलसिदास प्रभुपथ चढ़् यौ, जौ लेहु निबाहि ॥ ५ ॥

१०९

कस न करहु करुना हरे! दुखहरन मुरारि!
त्रिबिधताप-संदेह-सोक-संसय-भय-हारि ॥ १ ॥

इक कलिकाल-जनित मल, मतिमंद, मलिन-मन।
तेहिपर प्रभु नहिं कर सँभार, केहि भाँति जियै जन ॥ २ ॥

सब प्रकार समरथ प्रभो, मैं सब बिधि दीन।
यह जिय जानि द्रवौ नहीं, मै करम बिहीन ॥ ३ ॥

भ्रमत अनेक जोनि, रघुपति, पति आन न मोरे।
दुख-सुख सहौं, रहौं सदा सरनागत तोरे ॥ ४ ॥

तो सम देव न कोउ कृपालु, समुझौं मनमाहीं।
तुलसिदास हरि तोषिये, सो साधन नाहीं ॥ ५ ॥

११०

कहु केहि कहिय कृपानिधे! भव-जनित बिपति अति।
इंद्रिय सकल बिकल सदा, निज निज सुभाउ रति ॥ १ ॥

जे सुख-संपति, सरग-नरक संतत सँग लागी।
हरि! परिहरि सोइ जतन करत मन मोर अभागी ॥ २ ॥

मै अति दीन, दयालु देव सुनि मन अनुरागे।
जो न द्रवहु रघुबीर धीर, दुख काहे न लागे ॥ ३ ॥

जद्यपि मैं अपराध-भवन, दुख-समन मुरारे।
तुलसिदास कहँ आस यहै बहु पतित उधारे ॥ ४ ॥

१११

केसव! कहि न जाइ का कहिये।
देखत तव रचना बिचित्र हरि! समुझि मनहिं मन रहिये ॥ १ ॥

सून्य भीति पर चित्र, रंग नहिं, तनु बिनु लिखा चितेरे।
धोये मिटइ न मरइ भीति, दुख पाइय एहि तनु हेरे ॥ २ ॥

रबिकर-नीर बसै अति दारुन मकर रूप तेहि माहीं।
बदन-हीन सो ग्रसै चराचर, पान करन जे जाहीं ॥ ३ ॥

कोउ कह सत्य,झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल कोउ मानै।
ø
तुलसिदास परिहरै तीन भ्रम, सो आपन पहिचानै ॥ ४ ॥

११२

केसव! कारन कौन गुसाई।
जेहि अपराध असाध जानि मोहिं तजेउ अग्यकी नाई ॥ १ ॥

परम पुनीत संत कोमल-चित, तिनहिं तुमहिं बनि आई।
तौ कत बिप्र,ब्याध,गनिकहि तारेहु, कछु रही सगाई ? ॥ २ ॥

काल,करम,गति अगति जीवकी, सब हरि! हाथ तुम्हारे।
सोइ कछु करहु, हरहु ममता प्रभु! फिरउँ न तुमहिं बिसारे ॥ ३ ॥

जौ तुम तजहु, भजौं न आन प्रभु, यह प्रमान पन मोरे।
मन-बच-करम नरक-सुरपुर जहँ तहँ रघुबीर निहोरे ॥ ४ ॥

जद्यपि नाथ उचित न होत अस, प्रभु सों करौं ढिठाई।
तुलसिदास सीदत निसिदिन देखत तुम्हारि निठुराई ॥ ५ ॥ ý

११३

माधव! अब न द्रवहु केहि लेखे।
प्रनतपाल पन तोर, मोर पन जिअहुँ कमलपद देखे ॥ १ ॥

जब लगि मै न दीन,दयालु तैं, मैं न दास, तैं स्वामी।
तब लगि जो दुख सहेउँ कहेउँ नहिं, जद्यपि अंतरजामी ॥ २ ॥

तैं उदार, मैं कृपन, पतित मैं, तैं पुनीत, श्रुति गावै।
बहुत नात रघुनाथ! तोहि मोहि, अब न तजे बनि आवै ॥ ३ ॥

जनक-जननि,गुरुबंधु,सुहृदकल-पति, सब प्रकार हितकारी।
द्वैतरूप तम-कूप परौं नहिं, अस कछु जतन बिचारी ॥ ४ ॥ ø

सुनु अदभ्र करुना बारिजलोचन मोचन भय भारी।
तुलसिदास प्रभु! तव प्रकास बिनु, संसय टरै न टारी ॥ ५ ॥

ú ११४

माधव! मो समान जग माहीं।

सब बिधि हीन,मलीन,दीन अति, लीन-बिषय कोउ नाहीं ॥ १ ॥

तुम सम हेतुरहित कृपालु आरत-हित ईस न त्यागी।
मैं दुख-सोक-बिकल कृपालु! केहि कारन दया न लागी ॥ २ ॥

नाहिंन कछु औगुन तुम्हार, अपराध मोर मैं माना।
ग्यान-भवन तनु दियेहु नाथ, सोउ पाय न मैं प्रभु जाना ॥ ३ ॥

बेनु करील,श्रीखंड बसंतहि दूषन मृषा लगावै।
सार-रहित हत-भाग्य सुरभि, पल्लव सो कहु किमि पावै ॥ ४ ॥

सब प्रकार मैं कठिन,मृदुल हरि,दृढ़ बिचार जिय मोरे।
तुलसिदास प्रभु मोह-सृंखला, छुटिहि तुम्हारे छोरे ॥ ५ ॥

११५

माधव! मोह-फाँस क्यों टूटै।
बाहिर कोटि उपाय करिय, अभ्यंतर ग्रन्थि न छूटै ॥ १ ॥

घृतपूरन कराह अंतरगत ससि-प्रतिबिंब दिखावै।
ईंधन अनल लगाय कलपसत, औटत नास न पावै ॥ २ ॥

तरु-कोटर महँ बस बिहंग तरु काटे मरै न जैसे।
साधन करिय बिचार-हीन मन सुद्ध होइ नहिं तैसे ॥ ३ ॥

अंतर मलिन बिषय मन अति, तन पावन करिय पखारे।
मरइ न उरग अनेक जतन बलमीकि बिबिध बिधि मारे ॥ ४ ॥

तुलसिदास हरि-गुरु-करुना बिनु बिमल बिबेक न होई।
बिनु बिबेक संसार-घोर-निधि पार न पावै कोई ॥ ५ ॥

११६

माधव! असि तुम्हारि यह माया ।
करि उपाय पचि मरिय, तरिय नहिं जब लगि करहु न दाया ॥ १ ॥

सुनिय,गुनिय,समुझिय,समुझाइय,दसा हृदय नहिं आवै ।
जेहि अनुभव बिनु मोहजनित भव दारुन बिपति सतावै ॥ २ ॥

ब्रह्म-पियूष मधुर सीतल जो पै मन सो रस पावै ।
तौ कत मृगजल-रूप बिषय कारन निसि-बासर धावै ॥ ३ ॥

जेहिके भवन बिमल चिंतामनि,सो कत काँच बटोरै ।
सपने परबस परै, जागि देखत केहि जाइ निहोरै ॥ ४ ॥

ग्यान-भगति साधन अनेक, सब सत्य,झूँठ कछु नाही ।
तुलसिदास हरि-कृपा मिटै भ्रम, यह भरोस मनमाहीं ॥ ५ ॥

११७

हे हरि! कवन दोष तोहिं दीजै ।
जेहि उपाय सपनेहुँ दुरलभ गति, सोइ निसि-बासर कीजै ॥ १ ॥

जानत अर्थ अनर्थ-रूप, तमकूप परब यहि लागे ।
तदपि न तजत स्वान अज खर ज्यो, फिरत बिषय अनुरागे ॥ २ ॥

भूत-द्रोह कृत मोह-बस्य हित आपन मै न बिचारो ।
मद-मत्सर-अभिमान ग्यान-रिपु, इन महँ रहनि अपारो ॥ ३ ॥

बेद-पुरान सुनत समुझत रघुनाथ सकल जगव्यापी ।
बेधत नहिं श्रीखंड बेनु इव, सारहीन मन पापी ॥ ४ ॥

मैं अपराध-सिंधु करुनाकर ! जानत अंतरजामी ।
तुलसिदास भव-ब्याल-ग्रसित तव सरन उरग-रिपु-गामी ॥ ५ ॥

११८

हे हरि ! कवन जतन सुख मानहु ।
ज्यों गज-दसन तथा मम करनी, सब प्रकार तुम जानहु ॥ १ ॥

जो कछु कहिय करिय भवसागर तरिय बच्छपद जैसे ।
रहनि आन बिधि, कहिय आन, हरिपद-सुख पाइय कैसे ॥ २ ॥

देखत चारु मयूर बयन सुभ बोलि सुधा इव सानी ।
सबिष उरग-आहार,निठुर अस,यह करनी वह बानी ॥ ३ ॥

अखिल-जीव-वत्सल, निरमत्सर,दरन-कमल-अनुरागी ।
ते तव प्रिय रघुबीर धीरमति, अतिसय निज-पर-त्यागी ॥ ४ ॥

जद्यपि मम औगुन अपार संसार-जोग्य रघुराया ।
तुलसिदास निज गुन बिचारि करुनानिधान करु दाया ॥ ५ ॥

११९

हे हरि ! कवन जतन भ्रम भागै ।
देखत,सुनत,बिचारत यह मन, निज सुभाउ नहिं त्यागै ॥ १ ॥

भगति-ग्यान-बैराग्य सकल साधन यहि लागि उपाई ।
कोउ भल कहउ,देउ कछु, असि बासना न उरते जाई ॥ २ ॥

जेहि निसि सकल जीव सूतहिं तव कृपापात्र जन जागै ।
निज करनी बिपरीत देखि मोहिं समुझि महा भय लागै ॥ ३ ॥

जद्यपि भग्न-मनोरथ बिधिबस, सुख इच्छत, दुख पावै ।
चित्रकार करहीन जथा स्वारथ बिनु चित्र बनावै ॥ ४ ॥

हृषीकेश सुनि नाउँ जाउँ बलि, अति भरोस जिय मोरे ।
तुलसिदास इंद्रिय-संभव दुख, हरे बनिहिं प्रभु तोरे ॥ ५ ॥

१२०

हे हरि ! कस न हरहु भ्रम भारी ।
जद्यपि मृषा सत्य भासै जबलगि नहिं कृपा तुम्हारी ॥ १ ॥

अर्थ अबिद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गोसाई ।
बिन बाँधे निज हठ सठ परबस पर् यो कीरकी नाई ॥ २ ॥

सपने ब्याधि बिबिध बाधा जनु मृत्यु उपस्थित आई ।
बैद् अनेक उपाय करै जागे बिनु पीर न जाई ॥ ३ ॥

श्रुति-गुरु-साधु-समृति-संमत यह दृश्य असत दुखकारी ।
तेहि बिनु तजे, भजे बिनु रघुपति, बिपति सकै को टारी ॥ ४ ॥

बहु उपाय संसार-तरन कहँ, बिमल गिरा श्रुति गावै ।
तुलसिदास मैं-मोर गये बिनु जिउ सुख कबहुँ न पावै ॥ ५ ॥

१२१

हे हरि ! यह भ्रमकी अधिकाई ।
देखत, सुनत, कहत, समुझत संसय-संदेह न जाई ॥ १ ॥

जो जग मृषा ताप-त्रय-अनुभव होइ कहहु केहि लेखे ।
कहि न जाय मृगबारि सत्य,भ्रम ते दुख होइ बिसेखे ॥ २ ॥

सुभग सेज सोवत सपने, बारिधि बूडत भय लागै ।

कोटिहुँ नाव न पार पाव सो, जब लगि आपु न जागै ॥ ३ ॥

अनबिचार रमनीय सदा, संसार भयंकर भारी ।
सम-संतोष-दया-बिबेक तें, व्यवहारी सुखकारी ॥ ४ ॥

तुलसिदास सब बिधि प्रपञ्च जग, जदपि झूठ श्रुति गावै ।
रघुपति-भगति, संत-संगति बिनु, को भव-त्रास नसावै ॥ ५ ॥

१२२

मै हरि, साधन करइ न जानी ।
जस आमय भेषज न कीन्ह तस,दोष कहा दिरमानी ॥ १ ॥

सपने नृप कहँ घटै बिप्र-बध, बिकल फिरै अघ लागे ।
बाजिमेध सत कोटि करै नहिं सुद्ध होइ बिनु जागे ॥ २ ॥

स्वग महँ सर्प बिपुल भयदायक, प्रगट होइ अबिचारे ।
बहु आयुध धरि, बल अनेक करि हारहिं, मरइ न मारे ॥ ३ ॥

निज भ्रम ते रबिकर-सम्भव सागर अति भय उपजावै ।
अवगाहत बोहोत नौका चढ़ि कबहुँ पार न पावै ॥ ४ ॥

तुलसिदास जग आपु सहित जब लगि निरमूल न जाई ।
तब लगि कोटि कलप उपाय करि मरिय, तरिय नहिं भाई ॥ ५ ॥

१२३

अस कछु समुझि परत रघुराया !
बिनु तव कृपा दयालु ! दास-हित ! मोह न छूटै माया ॥ १ ॥

बाक्य-ग्यान अत्यंत निपुन भव-पार न पावै कोई ।
निसि गृहमध्य दीपकी बातन्ह, तम निबृत नहिं होई ॥ २ ॥

जैसे कोइ इक दीन दुखित अति असन-हीन दुख पावै ।
चित्र कलपतरु कामधेनु गृह लिखे न बिपति नसावै ॥ ३ ॥

षटरस बहुप्रकार भोजन कोउ, दिन अरु रैनि बखानै ।
बिनु बोले संतोष-जनित सुख खाइ सोइ पै जानै ॥ ४ ॥

जबलगि नहिं निज हृदि प्रकास, अरु बिषय-आस मनमाहीं ।
तुलसिदास तबलगि जग-जोनि भ्रमत सपनेहुँ सुख नाहीं ॥ ५ ॥

१२४

जौ निज मन परिहरै बिकारा।
तौ कत द्वैत-जनित संसृति-दुख,संसय,सोक अपारा ॥ १ ॥

सत्रु,मित्र,मध्यस्थ,तीनि ये, मन कीन्हे बरिआई।
त्यागन,गहन,उपेच्छनीय,अहि हाटक तृनकी नाई ॥ २ ॥

असन,बसन,पसु बस्तु बिबिध बिधिसब मनि महँ रह जैसे।
सरग,नरक,चर-अचर लोक बहु, बसत मध्य मन तैसे ॥ ३ ॥

बिटप-मध्य पुतरिका,सूत महँ कंचुकि बिनहिं बनाये।
मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रगटत अवसर पाये ॥ ४ ॥

रघुपति-भगति-बारि-छालित-चित, बिनु प्रयास ही सूझै।
तुलसिदास कह चिद-बिलास जग बूझत बूझत बूझै ॥ ५ ॥

१२५

मै केहि कहौं बिपति अति भारी। श्रीरघुबीर धीर हितकारी ॥ १ ॥

मम हृदय भवन प्रभु तोरा। तहँ बसे आइ बहु चोरा ॥ २ ॥

अति कठिन करहिं बरजोरा। मानहिं नहिं बिनय निहोरा ॥ ३ ॥

तम,मोह,लोभ,अहँकारा। मद,क्रोध,बोध-रिपु मारा ॥ ४ ॥

अति करहिं उपद्रव नाथा। मरदहिं मोहि जानि अनाथा ॥ ५ ॥

मैं एक,अमित बटपारा। कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥ ६ ॥

भागेहु नहिं नाथ! उबारा। रघुनायक, करहुँ सँभारा ॥ ७ ॥

कह तुलसिदास सुनु रामा। लूटहिं तसकर तव धामा ॥ ८ ॥

चिंता यह मोहिं अपारा। अपजस नहिं होइ तुम्हारा ॥ ९ ॥

१२६

मन मेरे,मानहि सिख मेरी। जो निजु भगति चहै हरि केरी ॥ १ ॥

उर आनहि प्रभु-कृत हित जेते। सेवहि ते जे अपनपौ चेते ॥ २ ॥

दुख-सुख अरु अपमान-बड़ाई। सब सम लेखहि बिपति बिहाई ॥ ३ ॥

सुनु सठ काल-ग्रसित यह देही। जनि तेहि लागि बिदूषहि केही ॥ ४ ॥
तुलसिदास बिनु असि मति आयै। मिलहिं न राम कपट-लौ लाये ॥ ५ ॥

१२७

मै जानी,हरिपद-रति नाहीं। सपनेहुँ नहिं बिराग मन माहीं ॥ १ ॥
जे रघुबीर चरन अनुरागे। तिन्ह सब भोग रोगसम त्यागे ॥ २ ॥
काम-भुजंग डसत जब जाहीं। बिषय-नींब कटु लगत न ताही ॥ ३ ॥
असमंजस अस हृदय बिचारी। बढ़त सोच नित नूतन भारी ॥ ४ ॥
जब कब राम-कृपा दुख जाई। तुलसिदास नहिं आन उपाई ॥ ५ ॥

१२८

सुमिरु सनेह-सहित सीतापति। रामचरन तजि नहिंन आनि गति ॥ १ ॥
जप,तप,तीरथ,जोग समाधी। कलिमत बिकल,न कछु निरुपाधी ॥ २ ॥
करतहुँ सुकृत न पाप सिराहीं। रकतबीज जिमि बाढ़त जाहीं ॥ ३ ॥
हरति एक अघ-असुर-जालिका। तुलसिदास प्रभु-कृपा-कालिका ॥ ४ ॥

१२९

रुचिर रसना तू राम राम राम क्यों न रटत।
सुमिरत सुख-सुकृत बढ़त, अघ-अमंगल घटत ॥ १ ॥

बिनु श्रम कलि-कलुषजाल कटु कराल कटत।
दिनकरके उदय जैसे तिमिर-तोम फटत ॥ २ ॥

जोग,जाग,जप,बिराग,तप सुतीरथ-अटत।
बाँधिबेको भव-गयंद रेनुकी रजु बटत ॥ ३ ॥

परिहरि सुर-मनि सुनाम, गुंजा लखि लटत।
लालच लघु तेरो लखि, तुलसि तोहि हटत ॥ ४ ॥

१३०

राम राम,राम राम,राम राम, जपत।
मंगल-मुद उदित होत, कलि-मल-छल छपत ॥ १ ॥

कहु के लहे फल रसाल, बबुर बीज बपत।
हाहरि जनि जनम जाय गाल गूल गपत ॥ २ ॥

काल,करम,गुन,सुभाउ सबके सीस तपत।
राम-नाम-महिमाकी चरचा चले चपत ॥ ३ ॥

साधन बिनु सिद्धि सकल बिकल लोग लपत।
कलिजुग बर बनिज बिपुल, नाम-नगर खपत ॥ ४ ॥

नाम सों प्रतीति-प्रीति हृदय सुथिर थपत।
पावन किये रावन-रिपु तुलसिहु-से अपत ॥ ५ ॥

१३१

पावन प्रेम राम-चरन-कमल जनम लाहु परम।
रामनाम लेत होत, सुलभ सकल धरम ॥ १ ॥

जोग,मख,बिबेक,बिरत,बेद-बिदित करम।
करिबे कहँ कटु कठोर, सुनत मधुर,नरम ॥ २ ॥

तुलसी सुनि, जानि-बूझि, भूलहि जनि भरम।
तेहि प्रभुको होहि, जाहि सब ही की सरम ॥ ३ ॥

१३२

राम-से प्रीतमकी प्रीति-रहित जीव जाय जियत।
जेहि सुख सुख मानि लेत, सुख सो समुझ कियत ॥ १ ॥

जहँ जहँ जेहि जोनि जनम महि, पताल,बियत।
तहँ-तहँ तू बिषय-सुखहिं, चहत लहत नियत ॥ २ ॥

कत बिमोह लट्यो,फट्यो गगन मगन सियत।
तुलसी प्रभु-सुजस गाइ, क्यों न सुधा पियत ॥ ३ ॥

१३३

तोसो हौं फिरि फिरि हित,प्रिय, पुनीत सत्य बचन कहत।
सुनि मन,गुनि,समुझि, क्यों न सुगम सुमग गहत ॥ १ ॥

छोटो बड़ो,खोटो खरो, जग जो जहँ रहत।
अपनो अपनेको भलो कहहु, को न चहत ॥ २ ॥

बिधि लगि लघु कीट अवधि सुख सुखी, दुख दहत।
पसु लौं पसुपाल ईस बाँधत छोरत नहत ॥ ३ ॥

बिषय मुद निहार भार सिर काँधे ज्यों बहत।
योहीं जिय जानि,मानि सठ! तू साँसति सहत ॥ ४ ॥

पायो केहि घृत बिचारु, हरिन-बारि महत।
तुलसी तकु ताहि सरन, जाते सब लहत ॥ ५ ॥

१३४

ताते हौं बार बार देव! द्वार परि पुकार करत।
आरति,नति,दीनता कहें प्रभु संकट हरत ॥ १ ॥

लोकपाल सोक-बिकल रावन-डर डरत।
का सुनि सकुचे कृपालु नर-सरीर धरत ॥ २ ॥

कौसिक,मुनि-तीय, जनक सोच-अनल जरत।
साधन केहि सीतल भये, सो न समुझि परत ॥ ३ ॥

केवट,खग,सबरि सहज चरनकमल न रत।
सनमुख तोहिं होत नाथ! कुतरुसुफरु फरत ॥ ४ ॥

बंधु-बैर कपि-बिभीषन गुरु गलानि गरत।
सेवा केहि रीझि राम, किये सरिस भरत ॥ ५ ॥

सेवक भयो पवनपूत साहिब अनुहरत।
ताको लिये नाम राम सबको सुढर ढरत ॥ ६ ॥

जाने बिनु राम-रीति पचि पचि जग मरत।
परिहरि छल सरन गये तुलसिहु-से तरत ॥ ७ ॥

राग सुहो बिलावल

१३५

राम सनेही सों तैं न सनेह कियो।
अगम जो अमरनि हूँ सो तनु तोहिं दियो ॥
दियो सुकुल जनम,सरीर सुंदर, हेतु जो फल चारिको।
जो पाइ पंडित परमपद, पावत पुरारि-मुरारिको ॥
यह भरतखंड,समीप सुरसरि,थल भलो,संगति भली।

तेरी कुमति कायर! कलप-बल्ली चहति है बिष फल फली ॥ १ ॥

! ! ! !

अजहूँ समुझि चित दै सुनु परमारथ।û
है हित सो जगहूँ जाहिते स्वारथ ॥
स्वारथहि प्रिय,स्वारथ सो का ते कौन बेद बखानई।
देखु खल,अहि-खेल परिहरि,सो प्रभुहि पहिचानाई ॥
पितु-मातु,गुरु,स्वामी,अपनपौ,तिय,तनय,सेवक,सखा।
प्रिय लगत जाके प्रेमसों,बिनु हेतु हित तैं नहि लखा ॥ २ ॥

! ! ! !

दूरि न सो हितू हेरि हिये ही है।
छलहि छाँड़ि सुमिरे छोहु किये ही है।
किये छोहु छाया कमल करकी भगतपर भजतहि भजै।
जगदीश,जीवन जीवको, जो साज सब सबको सजै ॥
हरिहि हरिता,बिधिहि बिधिता,सिवहि सिवता जो दई।
सोइ जानकी-पति मधुर मूरति,मोदमय मंगल मई ॥ ३ ॥

! ! ! !

ठाकुर अतिहि बड़ो,सील,सरल,सुठि।
ध्यान अगम सिवहूँ,भेट्यो केवट उठि ॥
भरि अंक भेट्यो सजल नयन, सनेह सिथिल सरीर सो।
सुर,सिद्ध,मुनि,कबि कहत कोउ न प्रेमप्रिय रघुबीर सो।
खग,सबरि,निसिचर,भालु,कपि किये आपु ते बंदित बड़े।
तापर तिन्ह कि सेवा सुमिरि जिय जात जनु सकुचनि गड़े ॥ ४ ॥

! ! ! !

स्वामीको सुभाव कह्यो सो जब उर आनिहै।
सोच सकल मिटिहै, राम भलो मन मानिहैं ॥
भलो मानिहै रघुनाथ जोरि जो हाथ माथो नाइहै।
ततकाल तुलसीदास जीवन-जनमको फल पाइहै ॥
जपि नाम करहि प्रनाम,कहि गुन-ग्राम,रामहिं धरि हिये।
बिचरहि अवनि अवनीस-चरनसरोज मन-मधुकर किये ॥ ५ ॥

(१)

जिव जबते हरितें बिलगान्यो। तबतें देह गेह निज जान्यो ॥
मायाबस स्वरुप बिसरायो। तेहि भ्रमतें दारुन दुख पायो ॥
पायो जो दारुन दुसह दुख, सुख-लेस सपनेहुँ नहिं मिल्यो।
भव-सूल,सोक अनेक जेहि, तेहि पंथ तू हठि हठि चल्यो ॥
बहु जोनि जनम,जरा,बिपति, मतिमंद! हरि जान्यो नहीं।
श्रीराम बिनु बिश्राम मूढ़! बिचारु, लखि पायो कहीं ॥

(२)

आनँद-सिंधु-मध्य तव बासा। बिनु जाने कस मरसि पियासा ॥
मृग-भ्रम-बारि सत्य जिय जानी। तहँ तू मगन भयो सुख मानी ॥
तहँ मगन मज्जसि,पान करि,त्रयकाल जल नाहीं जहाँ।
निज सहज अनुभव रूप तव खल! भूलि अब आयो तहाँ ॥
निरमल,निरंजन,निरबिकार,उदार,सुख तैं परिहर् यो।
निःकाज राज बिहाय नृप इव सपन कारागृह पर् यो ॥

(३)

तैं निज करम-डोरि दृढ़ कीन्हीं। अपने करनि गाँठि गहि दीन्हीं ॥
ताते परबस पर् यो अभागे। ता फल गरभ-बास-दुख आगे ॥
आगे अनेक समूह संसृत उदरगत जान्यो सोऊ।
सिर हेठ,ऊपर चरन, संकट बात नहिं पूछै कोऊ ॥
सोनित-पुरीष जो मूत्र-मल कृमि-कर्दमावृत सोवई।
कोमल सरीर,गँभीर बेदन, सीस धुनि-धुनि रोवई ॥

(४)

तू निज करम-जालल जहँ घेरो। श्रीहरि संग तज्यो नहिं तेरो ॥
बहुबिधि प्रतिपालन प्रभु कीन्हों। परम कृपालु ग्यान तोहि दीन्हों ॥
तोहि दियो ग्यान-बिबेक,जनम अनेककी तव सुधि भई।
तेहि ईसकी हौं सरन, जाकी बिषम माया गुनमई ॥
जेहि किये जीव-निकाय बस,रसहीन,दिन-दिन अति नई।
सो करौ बेगि सँभारि श्रीपति,बिपति, महँ जेहि मति दई ॥

(५)

पुनि बहुबिधि गलानि जिय मानी। अब जग जाइ भजौं चक्रपानी ॥

ऐसेहि करि बिचार चुप साधी। प्रसव-पवन प्रेरेउ अपराधी ॥
प्रेर् यो जो परम प्रचंड मारुत,कष्ट नाना तैं सह्यो।
सो ग्यान,ध्यान,बिराग,अनुभव जातना-पावक दह्यो ॥
अति खेद ब्याकुल,अलप बल,छिन एक बोलि न आवई।
तव तीव्र कष्ट न जान कोउ, सब लोग हरषित गावई ॥

(६)

बाल दसा जेते दुख पाये। अति असीम, नहिं जाहिं गनाये ॥
छुधा-ब्याधि-बाधा भइ भारी। बेदन नहिं जानै महतारी ॥
जननी न जानै पीर सो,केहि हेतु सिसु रोदन करै।
सोइ करै बिबिध उपाय, जातें अधिक तुव छाती जरै ॥
कौमार,सैसव अरु किसोर अपार अघ को कहि सकै।
ब्यतिरेक तोहि निरदय! महाखल! आन कहु को सहि सकै ॥

(७)

जोबन जुवती सँग रँग रात्यो। तब तू महा मोह-मद मात्यो ॥
ताते तजी धरम-मरजादा। बिसरे तब सब प्रथम बिषादा ॥
बिसरे बिषाद,निकाय-संकट समुझि नहिं फाटत हियो।
फिरि गर्भगत-आवर्त सृंसतिचक्र जेहि होइ सोइ कियो ॥
कृमि-भस्म-बिट-परिनाम तनु, तेहि लागि जग बैरी भयो।
परदार,परधन,द्रोहपर,संसार बाढ़ै नित नयो ॥

(८)

देखत ही आई बिरुधाई। जो तैं सपनेहुँ नाहिं बुलाई ॥
ताके गुन कछु कहे न जाहीं। सो अब प्रगट देखु तनु माहीं ॥
सो प्रगट तनु जरजर जराबस,ब्याधि,सूल सतावई।
सिर-कंप,इन्द्रिय-सक्ति प्रतिहत,बचन काहु न भावई ॥
गृहपालहूतें अति निरादर,खान-पान न पावई।
ऐसिहु दसा न बिराग तहँ,तृष्णा-तरंग बढ़ावई ॥

(९)

कहि को सकै महाभव तेरे। जनम एकके कछुक गनेरे ॥
चारि खानि संतत अवगाहीं। अजहुँ न करु बिचार मन माहीं ॥
अजहुँ बिचारु,बिकार तजि, भजु राम जन-सुखदायकं।

भवसिंधु दुस्तर जलरथं, भजु चक्रधर सुरनायकं ॥
बिनु हेतु करुनाकर,उदारे, अपार-माया-तारनं।
कैवल्य-पति,जगपति,रमापति,प्रानपति,गतिकारनं ॥

(१०)

रघुपति-भगति सुलभ,सुखकारी। सो त्रयताप-सोक-भय-हारी ॥
बिनु सतसंग भगति नहिं होई। ते तब मिलै द्रवै जब सोई ॥
जब द्रवै दीनदयालु राघव, साधु-संगति पाइये।
जेहि दरस-परस-समागमादिक पापरासि नसाइये ॥
जिनके मिले दुख-सुख समान, अमानतादिक गुन भये।
मद-मोह लोभ-बिषाद-क्रोध सुबोधतें सहजहिं गये ॥

(११)

सेवत साधु द्वैत-भय भागै। श्रीरघुबीर-चरन लय लागै ॥
देह-जनित विकार सब त्यागै। तब फिरि निज स्वरूप अनुरागै ॥
अनुराग सो निज रूप जो जगतें बिलच्छन देखिये।
सन्तोष,सम,सीतल,सदा दम, देहवंत न लेखिये ॥
निरमल,निरामय,एकरस,तेहि हरष-सोक न ब्यापई।
त्रैलोक-पावन सो सदा जाकी दसा ऐसी भई ॥

(१२)

जो तेहि पंथ चलै मन लाई। तौ हरि काहे न होहिं सहाई।
जो मारग श्रुति-साधु दिखावै। तेहि पथ चलत सबै सुख पावै ॥
पावै सदा सुख हरि-कृपा,संसार-आसा तजि रहै।
सपनेहुँ नहीं सुख द्वैत-दरसन, बात कोटिक को कहै ॥
द्विज,देव,गुरु,हरि,संत बिनु संसार-पार न पाइये।
यह जानि तुलसीदास त्रासहरन रमापति गाइये ॥

१३७

जो पै कृपा रघुपति कृपालुकी, बैर औरके कहा सरै।
होइ न बाँको बार भगतको, जो कोउ कोटि उपाय करै ॥ १ ॥

तकै नीचु जो मीचु साधुकी, सो पामर तेहि मीचू मरै ॥
बेद-बिदित प्रहलाद-कथा सुनि, को न भगति-पथ पाउँ धरै ? ॥ २ ॥

गज उधारि हरि थप्यो बिभीषन, ध्रुव अबिचल कबहूँ न टरै।

अंबरीष की साप सुरति करि, अजहुँ महामुनि ग्लानि गरै ॥ ३ ॥

सों धौं कहा जु न कियो सुजोधन, अबुध आपने मान जरै।
प्रभु-प्रसाद सौभाग्य बिजय-जस, पांडवनै बरिआइ बरै ॥ ४ ॥

जोइ जोइ कूप खनैगो परकहँ, सो सठ फिरि तेहि कूप परै।
सपनेहुँ सुख न संतद्रोहीकहँ, सुरतरु सोउ बिष-फरनि फरै ॥ ५ ॥

है काके द्वै सीस ईसके जौ हठि जनकी सीवँ चरै।
तुलसिदास रघुबीर-बाहुबल सदा अभय काहु न डरै ॥ ६ ॥

१३८

कबहुँ सो कर-सरोज रघुनायक! धरिहौ नाथ सीस मेरे।
जेहि कर अभय किये जन आरे, बारकल बिबस नाम टेरे ॥ १ ॥

जेहि कर-कमल कठोर संभुधन भंजि जनक-संसय मेट्यो।
जेहि कर-कमल उठाइ बंधु ज्यों, परम प्रीती केवट भेंट्यो ॥ २ ॥

जेहि कर-कमल कृपालु गीधकहँ, पिंड देइ निजधाम दियो।
जेहि कर बालि बिदारि दास-हित, कपिकुल-पति सुग्रीव कियो ॥ ३ ॥

आयो सरन सभीत बिभीषन जेहि कर-कमल तिलक कीन्हों।
जेहि कर गहि सर चाप असुर हति, अभयदान देवन्ह दीन्हों ॥ ४ ॥

सीतल सुखद छाँह जेहि करकी, मेटति पापो,ताप,माया।
निसि-बासर तेहि कर सरोजकी, चाहत तुलसिदास छाया ॥ ५ ॥

१३९

दीनदयालु,दुरित दारिद दुख दुनी दुसह तिहुँ ताप तई है।
देव दुवार पुकारत आरत, सबकी सब सुख हानि भई है ॥ १ ॥

प्रभुके बचन,बेद-बुध-सम्मत,'मम मूरति महिदेवमई है'।
तिनकी मति रिस-राग-मोह-मद,लोभ लालची लीलि लई है ॥ २ ॥

राज-समाज कुसाज कोटि कटु कलपित कलुष कुचाल नई है।
नीति,प्रतीति,प्रीति परमित पति हेतुबाद हठि हेरि हई है ॥ ३ ॥

आश्रम-बरन-धरम-बिरहित जग, लोक-बेद-मरजाद गई है।
प्रजा पतित,पाखंड-पापरत, अपने अपने रंग रई है ॥ ४ ॥

सांति,सत्य,सुभ,रीति गई घटि,बढ़ी कुरीति,कपट-कलई है।
सीदत साधु,साधुता सोचति,खल बिलसत,हुलसति खलई है ॥ ५ ॥

परमारथ स्वारथ,साधन भये अफल,सफल नहिं सिद्धि सई है।
कामधेनु-धरनी कलि-गोमर-बिबस बिकल जामति न बई है ॥ ६ ॥

कलि-करनी बरनिय कहाँ लौं,करत फिरत बिनु टहल टई है।
तापर दाँत पीसि कर मींजत, को जानै चित कहा ठई है ॥ ७ ॥

त्यों त्यों नीच चढ़त सिर ऊपर, ज्यों ज्यों सीलबस ढील दई है।
सरुष बरजि तरजिये तरजनी, कुम्हिलैहै कुम्हडेकी जई है ॥ ८ ॥

दीजै दादि देखि ना तौ बलि, महि मोद-मंगल रितई है।
भरे भाग अनुराग लोग कहैं, राम कृपा-चितवनि चितई है ॥ ९ ॥

बिनती सुनि सानंद हेरि हँसि, करुना-बारि भूमि भिजई है।
राम-राज भयो काज,सगुन सुभ, राजा राम जगत-बिजई है ॥ १० ॥

समरथ बड़ो,सुजान सुसाहब, सुकृत-सैन हारत जितई है।
सुजन सुभाव सराहत सादर, अनायास साँसति बितई है ॥ ११ ॥

उथपे थपन,उजारि बसावन, गई बहोरि बिरद सदई है।
तुलसी प्रभु आरत-आरतिहर, अभयबाँह केहि केहि न दई है ॥ १२ ॥

१४०

ते नर नरकरूप जीवत जग भव-भंजन-पद-बिमुख अभागी।
निसिबासर रुचिपाप असुचिमन,खलमति-मलिन,निगमापथ-त्यागी ॥ १ ॥

नहिं सतसंग भजन नहिं हरिको,स्रवन न राम-कथा-अनुरागी।
सुत-बित-दार-भवन-ममता-निसि सोवत अति, न कबहुँ मति जागी ॥ २ ॥

तुलसिदास हरिनाम-सुधा तजि, सठ हठि पियत बिषय-बिष माँगी।
सूकर-स्वान-सृगाल,सरिस जन, जनमत जगत जननि-दुख लागी ॥ ३ ॥

१४१

रामचंद्र! रघुनायक तुमसों हौं बिनती केहि भाँति करौं।
अघ अनेक अवलोकि आपने, अनघ नाम अनुमानि डरौं ॥ १ ॥

पर-दुख दुखी सुखी पर-सुख ते, संत-सील नहिं हृदय धरौं।

देखि आनकी बिपति परम सुख, सुनि संपति बिनु आगि जरौं ॥ २ ॥

भगति-बिराग-ग्यान साधन कहि बहु बिधि डहकत लोग फिरों।
सिव-सरबस सुखधाम नाम तव, बेचि नरकप्रद उदर भरौं ॥ ३ ॥

जानत हौं निज पाप जलधि जिय, जल-सीकर सम सुनत लरौं।
रज-सम-पर अवगुन सुमेरु करि, गुन गिरि-सम रजतें निदरौं ॥ ४ ॥

नाना बेष बनाय दिवस-निसि, पर-बित जेहि तेहि जुगुति हरौं।
एकौ पल न कबहुँ अलोल चित हित दै पद-सरोज सुमिरौं ॥ ५ ॥

जो आचरन बिचारहु मेरो,कलप कोटि लगि औटि मरौं।
तुलसिदास प्रभु कृपा-बिलोकनि,गोपद-ज्यों भवसिंधु तरौं ॥ ६ ॥

१४२

सकुचत हौं अति राम कृपानिधि! क्यों करि बिनय सुनावौं।
सकल धरम बिपरीत करत,केहि भाँति नाथ! मन भावौ ॥ १ ॥

जानत हौं हरि रूप चराचर, मैं हठि नयन न लावौं।
अंजन-केस-सिखा जुवती, तहँ लोचन-सलभ पठावौं ॥ २ ॥

स्रवननिको फल कथा तुम्हारी, यह समुझौं,समुझावौं।
तिन्ह स्रवननि परदोष निरंतर सुनि सुनि भरि भरि तावौं ॥ ३ ॥

जेहि रसना गुन गाइ तिहारे, बिनु प्रयास सुख पावौं।
तेहि मुख पर-अपवाद भेक ज्यों रटि-रटि जनम नसावौं ॥ ४ ॥

'करहु हृदय अति बिमल बसहिं हरि', कहि कहि सबहिं सिखावौं।
हौं निज उर अभिमान-मोह-मद खल-मंडली बसावौं ॥ ५ ॥

जो तनु धरि हरिपद साधहिं जन, सो बिनु काज गँवावौं।
हाटक-घट भरि धर् यो सुधा गृह, तजि नभ कूप खनावौं ॥ ६ ॥

मन-क्रम-बचन लाइ कीन्हे अघ, ते करि जतन दुरावौं।
पर-प्रेरित इरषा बस कबहुँक किय कछु सुभ,सो जनावौं ॥ ७ ॥

बिप्र-द्रोह जनु बाँट पर् यो, हठि सबसों बैर बढ़ावौ।
ताहूपर निज मति-बिलास सब संतन माँझ गनावौं ॥ ८ ॥

निगम सेस सारद निहोरि जो अपने दोष कहावौं।

तौ न सिराहिं कलप सत लगि प्रभु, कहा एक मुख गावौं ॥ ९ ॥

जो करनी आपनी बिचारौं, तौं कि सरन हौं आवौं।
मृदुल सुभाउ सील रघुपतिको, सो बल मनहिं दिखावौं ॥ १० ॥

तुलसिदास प्रभु सो गुन नहिं, जेहि सपनेहुँ तुमहिं रिझावौं।
नाथ-कृपा भवसिंधु धेनुपद सम जो जानि सिरावौं ॥ ११ ॥

१४३

सुनहु राम रघुबीर गुसाईं, मन अनीति-रत मेरो।
चरन-सरोज बिसारि तिहारे, निसिदिन फिरत अनेरो ॥ १ ॥

मानत नाहिं निगम-अनुसासन, त्रास न काहू केरो।
भूल्यो सूल करम-कोलुन्ह तिल ज्यों बहु बारनि पेरो ॥ २ ॥

जहँ सतसंग कथा माधवकी, सपनेहुँ करत न फेरो।
लोभ-मोह-मद-काम-कोह-रत, तिन्हसों प्रेम घनेरो ॥ ३ ॥

पर-गुन सुनत दाह, पर-दूषन सुनत हरख बहुतेरो।
आप पापको नगर बसावत, सहि न सकत पर खेरो ॥ ४ ॥

साधन-फल,श्रुति-सार नाम तव, भव-सरिता कहँ बेरो।
सो पर-कर काँकिनी लागि सठ, बेंचि होत हठि चेरो ॥ ५ ॥

कबहुँक हौं संगति-प्रभावतें,जाँउ सुमारग नेरो।
तब करि क्रोध संग कुमनोरथ देत कठिन भटभेरो ॥ ६ ॥

इक हौं दीन,मलीन,हीनमति,बिपतिजाल अति घेरो।
तापर सहि न जाय करुनानिधि, मनको दुसह दरेरो ॥ ७ ॥

हारि पर् यो करि जतन बहुत बिधि, तातें कहत सबेरो।
तुलसिदास यह त्रास मिटै जब हृदय करहु तुम डेरो ॥ ८ ॥

१४४

सो धौं को जो नाम-लाज ते, नहिं राख्यो रघुबीर।
कारुनीक बिनु कारन ही हरि हरी सकल भव-भीर ॥ १ ॥

बेद-बिदित,जग-बिदित अजामिल बिप्रबंधु अघ-धाम।
घोर जमालय जात निवार् यो सुत-हित सुमिरत नाम ॥ २ ॥

पसु पामर अभिमान-सिंधु गज ग्रस्यो आइ जब ग्राह।
सुमिरत सकृत सपदि आये प्रभु, हर् यो दुसह उर दाह ॥ ३ ॥

ब्याध,निषाद,गीध,गनिकादिक, अगनित औगुन-मूल।
नाम-औटतें राम सबनिकी दूरि करी सब सूल ॥ ४ ॥

केहि आचरन घाटि हौं तिनतें, रघुकुल-भूषन भूप।
सीदत तुलसिदास निसिबासर पर् यो भीम तम-कूप ॥ ५ ॥

१४५

कृपासिंधु! जन दीन दुवारे दादि न पावत काहे।
जब जहँ तुमहिं पुकारत आरत, तहँ तिन्हके दुख दाहे ॥ १ ॥

गज,प्रहलाद,पांडुसुत,कपि सबको रिपु-संकट मेट्यो।
प्रनत,बंधु-भय-बिकल,बिभीषन,उठि सो भरत ज्यों भेट्यो ॥ २ ॥

मैं तुम्हरो लेइ नाम ग्राम इक उर आपने बसावों।
भजन,बिबेक,बिराग,लोग भले, मैं क्रम-क्रम करि ल्यावों ॥ ३ ॥

सुनि रिस भरे कुटिल कामादिक, करहिं जोर बरिआई।
तिन्हहिं उजारि नारि-अरि-धन पुर राखहिं राम गुसाईं ॥ ४ ॥

सम-सेवा-छल-दान-दंड हौं, रचि उपाय पचि हार् यो।
बिनु कारनको कलह बड़ो दुख, प्रभुसों प्रगटि पुकार् यो ॥ ५ ॥

सुर स्वारथी,अनीस,अलायक,निठुर,दया चित नाहीं।
जाउँ कहाँ, को बिपति-निवारक, भवतारक जग माही ॥ ६ ॥

तुलसी जदपि पोच,तउ तुम्हरो, और न काहु केरो।
दीजै भगति-बाँह बारक, ज्यों सुबस बसै अब खेरो ॥ ७ ॥

१४६

हौं सब बिधि राम, रावरो चाहत भयो चेरो।
ठौर ठौर साहबी होत है, ख्याल काल कलि केरो ॥ १ ॥

काल-करम-इंद्रिय,बिषय गाहकगन घेरो।
हौं न कबूलत, बाँधि कै मोल करत करेरो ॥ २ ॥

बंदि-छोर तेरो नाम है, बिरुदैत बड़ेरो।

मैं कह्यो, तब छल-प्रीति कै माँगे उर डेरो ॥ ३ ॥

नाम-ओट अब लगि बच्यो मलजुग जग जेरो।
अब गरीब जन पोषिये पाइबो न हेरो ॥ ४ ॥

जेहि कौतुक बक/खग स्वानको प्रभु न्याव निबेरो।
तेहि कौतुक कहिये कृपालु! 'तुलसी है मेरो' ॥ ५ ॥

१४७

कृपासिंधु ताते रहौं निसिदिन मन मारे।
महाराज! लाज आपुही निज जाँघ उघारे ॥ १ ॥

मिले रहैं, मार् यौ चहै कामादि संघाती।
मो बिनु रहै न, मेरियै जारैं छल छाती ॥ २ ॥

बसत हिये हित जानि मैं सबकी रुचि पाली।
कियो कथकको दंड हौं जड़ करम कुचाली ॥ ३ ॥

देखी सुनी न आजु लौं अपनायति ऐसी।
करहिं सबै सिर मेरे ही फिरि परै अनैसी ॥ ४ ॥

बड़े अलेखी लखि परै, परिहरै न जाहीं।
असमंजसमें मगन हौं, लीजै गहि बाहीं ॥ ५ ॥

बारक बलि अवलोकिये, कौतुक जन जी को।
अनायास मिटि जाइगो संकट तुलसीको ॥ ६ ॥

१४८

कहौ कौन मुहँ लाइ कै रघुबीर गुसाई।
सकुचत समुझत आपनी सब साइँ दुहाई ॥ १ ॥

सेवत बस,सुमिरत सखा, सरनागत सो हौं।
गुनगन सीतानाथके चित करत न हौं हौं ॥ २ ॥

कृपासिंधु बंधु दीनके आरत-हितकारी।
प्रनत-पाल बिरुदावली सुनि जानि बिसारी ॥ ३ ॥

सेइ न धेइ न सुमिरि कै पद-प्रीति सुधारी।
पाइ सुसाहिब राम सों, भरि पेट बिगारी ॥ ४ ॥

नाथ गरीबनिवाज हैं,मैं गही न गरीबी।
तुलसी प्रभु निज ओर तें बनि परै सो कीबी ॥ ५ ॥

१४९

कहाँ जाउँ, कासों कहौं, और ठौर न मेरे।
जनम गँवायो तेरे ही द्वार किंकर तेरे ॥ १ ॥

मै तौ बिगारी नाथ सों आरतिके लीन्हें।
तोहि कृपानिधि क्यों बनै मेरी-सी कीन्हें ॥ २ ॥

दिन-दुरदिन दिन-दुरदसा, दिन-दुख दिन-दूषन।
जब लौं तू न बिलोकिहै रघुबंस-बिभूषन ॥ ३ ॥

दई पीठ बिनु डीठ मैं तुम बिस्व बिलोचन।
तो सों तुही न दूसरो नत-सोच-बिमोचन ॥ ४ ॥

पराधीन देव दीन हौं,स्वाधीन गुसाईं।
बोलनिहारे सों करै बलि बिनयकी झाईं ॥ ५ ॥

आपु देखि मोहि देखिये जन मानिय साँचो।
बड़ी ओट रामनामकी जेहि लई सो बाँचो ॥ ६ ॥

रहनि रीति राम रावरी नित हिय हुलसी है।
ज्यों भावै त्यों करु कृपा तेरो तुलसी है ॥ ७ ॥

१५०

रामभद्र! मोहिं आपनो सोच है अरु नाहीं।
जीव सकल संतापके भाजन जग माहीं ॥ १ ॥

नातो बड़े समर्थ सों इक ओर किधौं हूँ।
तोको मोसे अति घने मोको एकै तूँ ॥ २ ॥

बड़ी गलानि हिय हानि है सरबग्य गुसाईं।
कूर कुसेवक कहत हौं सेवककी नाईं ॥ ३ ॥

भलो पोच रामको कहैं मोहि सब नरनारी।
बिगरे सेवक स्वान ज्यों साहिब-सिर गारी ॥ ४ ॥

असमंजस मनको मिटै सो उपाय न सूझै।

दीनबंधु! कीजै सोई बनि परै जो बूझै ॥ ५ ॥

बिरुदावली बिलोकिये तिन्हमें कोउ हौं हौं।
तुलसी प्रभुको परिहर् यो सरनागत सो हौं ॥ ६ ॥

१५१

जो पै चेराई रामकी करतो न लजातो।
तौ तू दाम कुदाम ज्यों कर-कर न बिकातो ॥ १ ॥

जपत जीह रघुनाथको नाम नहिं अलसातो।
बाजीगरके सूम ज्यों खल खेह न खातो ॥ २ ॥

जौ तू मन! मेरे कहे राम-नाम कमातो।
सीतापति सनमुख सुखी सब ठाँव समातो ॥ ३ ॥

राम सोहाते तोहिं जौ तू सबहिं सोहातो।
काल करम कुल कारनी कोऊ न कोहातो ॥ ४ ॥

राम-नाम अनुरागही जिय जो रतिआतो।
स्वारथ-परमारथ-पथी तोहिं सब पतिआतो ॥ ५ ॥

सेइ साधु सुनि समुझि कै पर-पीर पिरातो।
जनम कोटिको काँदले हृद-हृदय थिरातो ॥ ६ ॥

भव-मग अगम अनंत है, बिनु श्रमहि सिरातो।
महिमा उलटे नामकी मुनि कियो किरातो ॥ ७ ॥

अमर-अगम तनु पाइ सो जड़ जाय न जातो।
होतो मंगल-मूल तू, अनुकूल बिधातो ॥ ८ ॥

जो मन-प्रीति-प्रतीतिसों राम-नामहिं रातो।
नसातो
तुलसी रामप्रसादसों तिहुँताप —— ॥ ९ ॥
नसातो

१५२

राम भलाई आपनी भल कियो न काको।
जुग जुग जानकीनाथको जग जागत साको ॥ १ ॥

ब्रह्मादिक बिनती करी कहि दुख बसुधाको।
रबिकुल-कैरव-चंद भो आनंद-सुधाको ॥ २ ॥

कौसिक गरत तुषार ज्यों तकि तेज तियाको।
प्रभु अनहित हित को दियो फल कोप कृपाको ॥ ३ ॥

हर् यो पाप आप जाइकै संताप सिलाको।
सोच-मगन काढ्यो सही साहिब मिथिलाको ॥ ४ ॥

रोष-रासि भृगुपति धनी अहमिति ममताको।
चितवत भाजन करि लियो उपसम समताको ॥ ५ ॥

मुदित मानि आयसु चले बन मातु-पिताको।
धरम-धुरंधर धीरधुर गुन-सील-जिता को ? ॥ ६ ॥

गुह गरीब गतग्याति हू जेहि जिउ न भखा को ?
पायो पावन प्रेम ते सनमान सखाको ॥ ७ ॥

सदगति सबरी गीधकी सादर करता को ?
सोच-सींव सुग्रीवके संकट-हरता को ? ॥ ८ ॥

अस काल-गहा
राखि बिभीषनको सकै ———– को ?
तेहि काल कहाँ
आज बिराजत राज है दसकंठ जहाँको ॥ ९ ॥

बालिस बासी अवधको बूझिये न खाको।
सो पाँवर पहुँचो तहाँ जहँ मुनि-मन थाको ॥ १० ॥

गति न लहै राम-नामसों बिधि सो सिरिजा को ?
सुमिरत कहत प्रचारि कै बल्लभ गिरिजाको ॥ ११ ॥

अकनि अजामिलकी कथा सानंद न भा को ?
नाम लेत कलिकालहू हरिपुरहिं न गा को ? ॥ १२ ॥

राम-नाम-महिमा करै काम-भुरुह आको।
साखी बेद पुरान है तुलसी-तन ताको ॥ १३ ॥

१५३

मेरे रावरियै गति है रघुपति बलि जाउँ ।

निलज नीच निरधन निरगुन कहँ, जग दूसरो न ठाकुर ठाउँ ॥ १ ॥

है घर-घर बहु भरे सुसाहिब, सूझत सबनि आपनो दाउँ ।
बानर-बंधु बिभीषन-हितु बिनु, कोसलपाल कहूँ न समाउँ ॥ २ ॥

प्रनतारति- भंजन जन-रंजन, सरनागत पबि-पंजर नाउँ ।
कीजै दास दासतुलसी अब, कृपासिंधु बिनु मोल बिकाउँ ॥ ३ ॥

१५४

देव ! दूसरो कौन दीनको दयालु ।
सीलनिधान सुजान-सिरोमनि, सरनागत-प्रिय प्रनत-पालु ॥ १ ॥

को समरथ सरबग्य सकल प्रभु, सिव-सनेह-मानस मरालु ।
को साहिब किये मीत प्रीतिबस खग निसिचर कपि भील भालु ॥ २ ॥

नाथ हाथ माया-प्रपंच सब,जीव-दोष-गुन-करम-कालु ।
तुलसिदास भलो पोच रावरो, नेकु निरखि कीजिये निहालु ॥ ३ ॥

१५५

बिस्वास एक राम-नामको ।
मानत नहि परतीति अनत ऐसोइ सुभाव मन बामको ॥ १ ॥

पढिबो पर् यो न छठी छ मत रिगु जजुर अथर्वन सामको ।
ब्रत तीरथ तप सुनि सहमत पचि मरै करै तन छाम को ? ॥ २ ॥

करम-जाल कलिकाल कठिन आधीन सुसाधित दामको ।
ग्यान बिराग जोग जप तप, भय लोभ मोह कोह कामको ॥ ३ ॥

सब दिन सब लायक भव गायक रघुनायक गुन-ग्रामको ।
बैठे नाम-कामतरु-तर डर कौन घोर घन घामको ॥ ४ ॥

को जानै को जैहै जमपुर को सुरपुर पर धामको ।
तुलसिहिं बहुत भलो लागत जग जीवन रामगुलामको ॥ ५ ॥

१५६

कलि नाम कामतरु रामको ।
दलनिहार दारिद दुकाल दुख, दोष घोर घन घामको ॥ १ ॥

नाम लेत दाहिनो होत मन,बाम बिधाता बामको ।

कहत मुनीस महेस महातम,उलटे सूधे नामको ॥ २ ॥

भलो लोक-परलोक तासु जाके बल ललित-ललामको ।
तुलसी जग जानियत नामते सोच न कूच मुकामको ॥ ३ ॥

१५७

सेइये सुसाहिब राम सो ।
सुखद सुसील सुजान सूर सुचि, सुंदर कोटिक काम सो ॥ १ ॥

सारद सेस साधु महिमा कहैं, गुनगन-गायक साम सो ।
सुमिरि सप्रेम नाम जासों रति चाहत चंद्र-ललाम सो ॥ २ ॥

गमन बिदेस न लेस कलेसको,सकुचत सकृत प्रनाम सो ।
साखी ताको बिदित बिभीषन, बैठो है अबिचल धाम सो ॥ ३ ॥

टहल सहल जन महल-महल,जागत चारो जुग जाम सो ।
देखत दोष न रीझत ,रीझत सुनि सेवक गुन-ग्राम सो ॥ ४ ॥

जाके भजे तिलोक-तिलक भये,त्रिजग जोनि तनु तामसो ।
तुलसी ऐसे प्रभुहिं भजै जो न ताहि बिधाता बाम सो ॥ ५ ॥

राग नट

१५८

कैसे देउँ नाथहिं खोरि ।
काम-लोलुप भ्रमत मन हरि भगति परिहरि तोरि ॥ १ ॥

बहुत प्रीति पुजाइबे पर, पूजिबे पर थोरि।
देत सिख सिखयो न मानत,मूढता असि मोरि ॥ २ ॥

किये सहित सनेह जे अघ हृदय राखे चोरि ।
संग-बस किये सुभ सुनाये सकल लोक निहोरि ॥ ३ ॥

करौं जो कछु धरौं सचि-पचि सुकृत-सिला बटोरि ।
पैठि उर बरबस दयानिधि दंभ लेत अँजोरि ॥ ४ ॥

लोभ मनहिं नचाव कपि ज्यों, गरे आसा-डोरि ।
बात कहौं बनाइ बुध ज्यों, बर बिराग निचोरि ॥ ५ ॥

एतेहुँ पर तुम्हरो कहावत,लाज अँचई घोरि ।

निलजता पर रीझि रघुबर, देहु तुलसिहिं छोरि ॥ ६ ॥

१५९

है प्रभु ! मेरोई सब दोसु ।
सीलसींधु कृपालु नाथ अनाथ आरत-पोसु ॥ १ ॥

बेष बचन बिराग मन अघ अवगुननिको कोसु ।
राम प्रीती प्रतीति पोली, कपट-करतब ठोसु ॥ २ ॥

राग-रंग कुसंग ही सों, साधु-संगति रोसु ।
चहत केहरि-जसहिं सेइ सृगाल ज्यों खरगोसु ॥ ३ ॥

संभु-सिखवन रसन हूँ नित राम-नामहिं घोसु ।
दंभहू कलि नाम कुंभज सोच-सागर-सोसु ॥ ४ ॥

मोद-मंगल-मूल अति अनुकूल निज निरजोसु ।
रामनाम प्रभाव सुनि तुलसिहुँ परम परितोसु ॥ ५ ॥

१६०

मैं हरि पतित-पावन सुने ।
मैं पतित तुम पतित-पावन दोउ बानक बने ॥ १ ॥

ब्याध गनिका गज अजामिल साखि निगमनि भने ।
और अधम अनेक तारे जात कापै गने ॥ २ ॥

जानि नाम अजानि लीन्हें नरक सुरपुर मने ।
दासतुलसी सरन आयो, राखिये आपने ॥ ३ ॥

राग मलार

१६१

तों सों प्रभु जो पै कहुँ कोउ होतो ।
तो सहि निपट निरादर निसिदिन, रटि लटि ऐसो घटि को तो ॥ १ ॥

कृपा-सुधा-जलदान माँगिबो कहाँ सो साँच निसोतो ।
स्वाति-सनेह-सलिल-सुख चाहत चित-चातक सो पोतो ॥ २ ॥

काल-करम-बस मन कुमनोरथ कबहुँ कबहुँ कुछ भो तो ।
ज्यों मुदमय बसि मीन बारि तजि उछरि भभरि लेत गोतो ॥ ३ ॥

जितो दुराव दासतुलसी उर क्यों कहि आवत ओतो ।
तेरे राज राय दसरथके, लयो बयो बिनु जोतो ॥ ४ ॥

रागसोरठ

१६२

ऐसो को उदार जग माहीं ।
बिनु सेवा जो द्रवै दीनपर राम सरिस कोउ नाहीं ॥ १ ॥

जो गति जोग बिराग जतन करि नहिं पावत मुनि ग्यानी ।
सो गति देत गीध सबरी कहँ प्रभु न बहुत जिय जानी ॥ २ ॥

जो संपति दस सीस अरप करि रावन सिव पहँ लीन्हीं ।
सो संपदा बिभीषन कहँ अति सकुच-सहित हरि दीन्ही ॥ ३ ॥

तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो ।
तौ भजु राम, काम सब पूरन करै कृपानिधि तेरो ॥ ४ ॥

१६३

एकै दानि-सिरोमनि साँचो।
जोइ जाच्यो सोइ जाचकतावस, फिरि बहु नाच न नाचो ॥ १ ॥

सब स्वारथी असुर सुर नर मुनि कोउ न देत बिनु पाये।
कोसलपालु कृपालु कलपतरु,द्रवत सकृत सिर नाये ॥ २ ॥

हरिहु और अवतार आपने, राखी बेद-बड़ाई।
लै चिउरा निधि दई सुदामहिं जद्यपि बाल मिताई ॥ ३ ॥

कपि सबरी सुग्रीव बिभीषन, को नहिं कियो अजाची।
अब तुलसिहि दुख देति दयानिधि दारून आस-पिसाची ॥ ४ ॥

१६४

जानत प्रीति-रीति रघुराई।
नाते सब हाते करी राखत राम सनेह-सगाई ॥ १ ॥

नेह निबाहि देह तजि दसरथ, कीरति अचल चलाई।
ऐसेहु पितु तें अधिक गीधपर ममता गुन गरुआई ॥ २ ॥

तिय-बिरही सुग्रीव सखा लखि प्रानप्रिया बिसराई।

रन पर् यो बंधु बिभीषन ही को, सोच हृदय अधिकाई ॥ ३ ॥

घर गुरुगृह प्रिय सदन सासुरे,भइ जब जहँ पहुनाई।
तब तहँ कहि सबरीके फलनिकी रुचि माधुरी न पाई ॥ ४ ॥

सहज सरूप कथा मुनि बरनत रहत सकुचि सिर नाई।
केवट मीत कहे सुख मानत बानर बंधु बड़ाई ॥ ५ ॥

प्रेम-कनौड़ो रामसो प्रभु त्रिभुवन तिहुँकाल न भाई।
तेरो रिनी हौं कह्यो कपि सों ऐसी मानही को सेवकाई ॥ ६ ॥

तुलसी राम-सनेह-सील लखि, जो न भगति उर आई।
तौ तोहिं जनमि जाय जननी जड़ तनु-तरुनता गवाँई ॥ ७ ॥

१६५

रघुबर! रावरि यहै बड़ाई।
निदरि गनी आदर गरीबपर ,करत कृपा अधिकाई ॥ १ ॥

थके देव साधन करि सब, सपनेहु नहिं देत दिखाई।
केवट कुटिल भालु कपि कौनप, कियो सकल संग भाई ॥ २ ॥

मिलि मुनिबृंद फिरत दंडक बन, सो चरचौ न चलाई।
बारहि बार गीध सबरीकी बरनत प्रीति सुहाई ॥ ३ ॥

स्वान कहे तें कियो पुर बाहिर, जती गयंद चढ़ाई।
तिय-निंदक मतिमंद प्रजा रज निज नय नगर बसाई ॥ ४ ॥

यहि दरबार दीनको आदर, रीति सदा चलि आई।
दीनदयालु दीन तुलसीकी काहु न सुरति कराई ॥ ५ ॥

१६६

ऐसे राम दीन-हितकारी।
अतिकोमल करुनानिधान बिनु कारन पर-उपकारी ॥ १ ॥

साधन-हीन दीन निज अघ-बस, सिला भई मुनि-नारी।
गृहतें गवनि परसि पद पावन घोर सापतें तारीं। २ ॥

हिंसारत निषाद तामस बपु, पसु-समान बनचारी।

भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेमबस, नहिं कुल जाति बिचारी ॥ ३ ॥

जद्यपि द्रोह कियो सुरपति-सुत, कह न जाय अति भारी।
सकल लोक अवलोकि सोकहत, सरन गये भय टारी ॥ ४ ॥

बिहँग जोनि आमिष अहार पर, गीध कौन ब्रतधारी।
जनक-समान क्रिया ताकी निज कर सब भाँति सँवारी ॥ ५ ॥

अधम जाति सबरी जोषित जड़, लोक-बेद तें न्यारी।
जानि प्रीति, दै दरस कृपानिधि, सोउ रघुनात उधारी ॥ ६ ॥

कपि सुग्रीव बंधु-भय-ब्याकुल आयो सरन पुकारी।
सहि न सके दारुन दुख जनके, हत्यो बालि,सहि गारी ॥ ७ ॥

रिपुको अनुज बिभीषन निशिचर, कौन भजन अधिकारी।
सरन गये आगे ह्वै लीन्हौं भेंट्यो भुजा पसारी ॥ ८ ॥

असुभ होइ जिनके सुमिरे ते बानर रीछ बिकारी।
बेद-बिदित पावन किये ते सब, महिमा नाथ! तुम्हारी ॥ ९ ॥

कहँ लगि कहौं दीन अगनित जिन्हकी तुम बिपति निवारी।
कलिमल-ग्रसित दासतुलसीपर, काहे कृपा बिसारी ? ॥ १० ॥

१६७

रघुपति-भगति करत कठिनाई।
कहत सुगम करनी अपार जानै सोइ जेहि बनि आई ॥ १ ॥

जो जेहि कला कुसल ताकहँ सोइ सुलभ सदा सुखकारी।
सफरी सनमुख जल-प्रवाह सुरसरी बहै गज भारी ॥ २ ॥

ज्यों सर्करा मिलै सिकता महँ, बलतें न कोउ बिलगावै।
अति रसस्य सूच्छम पिपीलिका, बिनु प्रयास ही पावै ॥ ३ ॥

सकल दृश्य निज उदर मेलि, सोवे निद्रा तजि जोगी।
सोइ हरिपद अनुभवै परम सुख, अतिसय द्वैत-बियोगी ॥ ४ ॥

सोक मोह भय हरष दिवस-निसि देस-काल तहँ नाहीं।
तुलसिदास यहि दसाहीन संसय निरमूल न जाहीं ॥ ५ ॥

१६८

जो पै राम-चरन-रति होती।
तौ कत त्रिबिध सूल निसिबासर सहते बिपति निसोती ॥ १ ॥

जो संतोष-सुधा निसिबासर सपनेहुँ कबहुकँ पावै।
तौ कत बिषय बिलोकि झूँठ जल मन-कुरंग ज्यों धावै ॥ २ ॥

जो श्रीपति-महिमा बिचारि उर भजते भाव बढ़ाए।
तौ कत द्वार-द्वार कूकर ज्यों फिरते पेट खलाए ॥ ३ ॥

जे लोलुप भये दास आसके ते सबहीके चेरे।
प्रभु-बिस्वास आस जीती जिन्ह, ते सेवक हरि केरे ॥ ४ ॥

नहिं एकौ आचरन भजनको, बिनय करत हौं ताते।
कीजै कृपा दासतुलसी पर, नाथ नामके नाते ॥ ५ ॥

१६९

जो मोही राम लागते मीठे।
तौ नवरस षटरस-रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे ॥ १ ॥

बंचक बिषय बिबिध तनु धरि अनुभवे सुने अरु डीठे।
यह जानत हौं हृदय आपने सपने न अघाइ उबीठे ॥ २ ॥

तुलसिदास प्रभु सों एहि बल बचन कहत अति ढीठे।
नामकी लाज राम करुनाकर केहि न दिये कर चीठे ॥ ३ ॥

१७०

यों मन कबहूँ तुमहिं न लाग्यो।
ज्यों छल छाँड़ि सुभाव निरंतर रहत बिषय अनुराग्यो ॥ १ ॥

ज्यों चितई परनारि, सुने पातक-प्रपंच घर-घरके।
त्यों न साधु, सुरसरि-तरंग-निरमल गुनगन रघुबरके ॥ २ ॥

ज्यों नासा सुगंधरस-बस, रसना षटरस-रति मानी।
राम-प्रसाद-माल जूठन लगि त्यों न ललकि ललचानी ॥ ३ ॥

चंदन-चंदबदनि-भूषन-पट ज्यों चह पाँवर परस्यो।
त्यों रघुपति-पद-पदुम-परस को तनु पातकी न तरस्यो ॥ ४ ॥

ज्यों सब भाँती कुदेव कुठाकुर सेये बपु बचन हिये हूँ।

त्यों न राम सुकृतग्य जे सकुचत सकृत प्रनाम किये हूँ ॥ ५ ॥

चंचल चरन लोभ लगि लोलुप द्वार-द्वार जग बागे।
राम-सीय-आस्रमनि चलत त्यों भये न स्रमित अभागे ॥ ६ ॥

सकल अंग पद-बिमुख नाथ मुख नामकी ओट लई है।
है तुलसिहिं परतीति एक प्रभु-मूरति कृपामई है ॥ ७ ॥

१७१

कीजै मोको जमजातनामई।
राम! तुमसे सुचि सुहृद साहिबहिं ,मैं सठ पीठि दई ॥ १ ॥

गरभबास दस मास पालि पितु-मातु-रूप हित कीन्हों।
जड़हि बिबेक,सुसील खलहिं, अपराधहिं आदर दीन्हों ॥ २ ॥

कपट करौं अंतरजामिहुँ सों, अघ ब्यापकहिं दुरावौं।
ऐसेहु कुमति कुसेवक पर रघुपति न कियो मन बावौं ॥ ३ ॥

उदर भरौं कोंकर कहाइ बेंच्यौं बिषयनि हाथ हियो है।
मोसे बंचकको कृपालु छल छाँड़ि कै छोह कियो है ॥ ४ ॥

पल-पलके उपकार रावरे जानि बूझी सुनि नीके।
भिद्यो न कुलिसहुँ ते कठोर चित कबहुँ प्रेम सिय-पीके ॥ ५ ॥

स्वामीकी सेवक-हितता सब, कछु निज साँई-द्रोहाई।
मैं मति-तुला तौलि देखी भइ मेरेहि दिसि गरूआई ॥ ६ ॥

एतेहु पर हित करत नाथ मेरो, करि आये, अरु करिहैं।
तुलसी अपनी ओर जानियत प्रभुहि कनौड़ो भरिहैं ॥ ७ ॥

१७२

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपातें संत-सुभाव गहौंगो ॥ १ ॥

जथालाभसंतोष सदा, काहू सों कछु न चहौंगो।
पर-हित-निरत निरंतर, मन क्रम बचन नेम निबहौंगो ॥ २ ॥

परुष बचन अति दुसह श्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत मान, सम शीतल मन, परगुन नहिं दोष कहौंगो ॥ ३ ॥

परहरि देह-जनित चिंता, दुख-सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिचल हरि-भगति लहौंगो ॥ ४ ॥

१७३

नाहिंन आवत आन भरोसो।
यहि कलिकाल सकल साधनतरु है स्त्रम-फलनि फरो सो ॥ १ ॥

तप,तीरथ,उपवास,दान,मख जेहि जो रुचै करो सो।
पायेहि पै जानिबो करम-फल भरि-भरि बेद परोसो ॥ २ ॥

आगम-बिधि जप-जग करत नर सरत न काज खरो सो।
सुख सपनेहु न जोग-सिधि-साधन, रोग बियोग धरो सो ॥ ३ ॥

काम, क्रोध,मद,लोभ,मोह मिलि ग्यान बिराग हरो सो।
बिगरत मन संन्यास लेत जल नावत आम घरो सो ॥ ४ ॥

बहु मत मुनि बहु पंथ पुराननि जहाँ-तहाँ झगरो सो।
गुरु कह्यो राम-भजन नीको मोंहि लगत राज-डगरो सो ॥ ५ ॥

तुलसी बिनु परतीती प्रीति फिरि-फिरि पचि मरै मरो सो।
रामनाम-बोहित भव-सागर चाहै तरन तरो सो ॥ ६ ॥

१७४

जाके प्रिय न राम-बैदेही।
तजिये ताहि
——– कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥ १ ॥

सो छाँड़िये
तज्यो पिता प्रहलाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो कंत ब्रज-बनितन्हि, भये मुद-मंगलकारी ॥ २ ॥

नाते नेह रामके मनियत सुहृद सुसेब्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥ ३ ॥

तुलसि सो सब भाँति परम हित पूज्य प्रानते प्यारो।
जासों होय सनेह राम-पद, एतो मतो हमारो ॥ ४ ॥

१७५

रहनि

जो पै —रामसों नाहीं।

लगन

तौ नर खर कूकर सूकर सम वृथा जियत जग माहीं ॥ १ ॥

काम,क्रोध,मद,लोभ,नींद,भय,भूख,प्यास सबहीके।
मनुज देह सुर-साधु सराहत, सो सनेह सिय-पीके ॥ २ ॥

सूर,सुजान,सुपूत सुलच्छन गनियत गुन गरुआई।
बिनु हरिभजन इँदारुनके फल तजत नहीं करुआई ॥ ३ ॥

कीरति, कुल करतूति, भूति भलि, सील, सरूप सलोने।
तुलसी प्रभु-अनुराग-रहित जस सालन साग अलोने ॥ ४ ॥

१७६

राख्यो राम सुस्वामी सों नीच नेह न नातो। एते अनादर हूँ तोहि ते न हातो ॥ १ ॥

जोरे नये नाते नेह फोकट फीके। देहके दाहक, गाहक जीके ॥ २ ॥

अपने अपनेको सब चाहत नीको। मूल दुहुँको दयालु दूलह सीको ॥ ३ ॥

जीवको जीवन प्रानको प्यारो। सुखहूको सूख रामसो बिसारो ॥ ४ ॥

कियो करैगो तोसे खलको भलो। ऐसे सुसाहब सों तू कुचाल क्यौं चलो ॥ ५ ॥

तुलसी तेरी भलाई अजहूँ बूझै। राढ़उ राउत होत फिरिकै जूझै ॥ ६ ॥

१७७

जो तुम त्यागों राम हौं तौं नहीं त्यागो। परिहरि पाँय काहि अनुरागों ॥ १ ॥

सुखद सुप्रभु तुम सो जगमाहीं। श्रवन-नयन मन गोचर नाहीं ॥ २ ॥

हौं जड़ जीव,ईस रघुराया। तुम मायापति,हौं बस माया ॥ ३ ॥

हौं तो कुजाचक,स्वामी सुदाता। हौं कुपूत, तुम हितु पितु-माता ॥ ४ ॥

जो पै कहुँ कोउ बूझत बातो। तौ तुलसी बिनु मोल बिकातो ॥ ५ ॥

१७८

भयेहूँ उदास राम, मेरे आस रावरी।

आरत स्वारथी सब कहैं बात बावरी ॥ १ ॥

जीवनको दानी घन कहा ताहि चाहिये।
प्रेम नेमके निबाहे चातक सराहिये ॥ २ ॥

मीनतें न लाभ-लेस पानी पुन्य पीनको।
जल बिनु थल कहा मीचु बिनु मीनको ॥ ३ ॥

बड़े ही की ओट बलि बाँचि आये छोटे हैं।
चलत खरेके संग जहाँ-तहाँ खोटे हैं ॥ ४ ॥

यहि दरबार भलो दाहिनेहु-बामको।
मोको सुभदायक भरोसो राम-नामको ॥ ५ ॥

कहत नसानी ह्वै ह्वै हिये नाथ नीकी है।
जानत कृपानिधान तुलसीके जीकी है ॥ ६ ॥

राग बिलावल

१७९

कहाँ जाउँ, कासों कहौं, कौन सुनै दीनकी।
त्रिभुवन तुही गति सब अंगहीनकी ॥ १ ॥

जग जगदीस घर घरनि घनेरे हैं।
निराधारके अधार गुनगन तेरे हैं ॥ २ ॥

गजराज-काज खगराज तजि धायो को।
मोसे दोस-कोस पोसे, तोसे माय जायो को ॥ ३ ॥

मोसे कूर कायर कुपूत कौड़ी आधके।
किये बहुमोल तैं करैया गीध-श्राधके ॥ ४ ॥

तुलसीकी तेरे ही बनाये,बलि,बनैगी।
प्रभुकी बिलंब-अंब दोष-दुख जनैगी ॥ ५ ॥

१८०

बारक बिलोकि बलि कीजै मोहिं आपनो।
राय दशरथके तू उथपन-थापनो ॥ १ ॥

साहिब सरनपाल सबल न दूसरो।

तेरो नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो ॥ २ ॥

बचन करम तेरे मेरे मन गड़े हैं।
देखे सुने जाने मैं जहान जेते बड़े हैं ॥ ३ ॥

कौन कियो समाधान सनमान सीलाको।
भृगुनाथ सो रिषी जितैया कौन लीलाको ॥ ४ ॥

मातु-पितु-बन्धु-हितु, लोक-बेदपाल को।
बोलको अचल, नत करत निहाल को ॥ ५ ॥

संग्रही सनेहबस अधम असाधुको।
गीध सबरीको कहौ करिहै सराधु को ॥ ६ ॥

निराधारको अधार, दीनको दयालु को।
मीत कपि-केवट-रजनिचर-भालु को ॥ ७ ॥

रंक,निरगुनी,नीच जितने निवाजे हैं।
महाराज! सुजन -समाज ते बिराजे हैं ॥ ८ ॥

साँची बिरुदावली न बढ़ि कहि गई है।
सीलसिंधु! ढील तुलसीकी बेर भई है ॥ ९ ॥

१८१

केहू भाँति कृपासिंधु मेरी ओर हेरिये।
मोको और ठौर न, सुटेक एक तेरिये ॥ १ ॥

सहस सिलातें अति जड़ मति भई है।
कासों कहौं कौन गति पाहनिहिं दई है ॥ २ ॥

पद-राग-जाग चहौं कौसिक ज्यों कियो हौं।
कलि-मल खल देखि भारी भीति भियो हौं ॥ ३ ॥

करम-कपीस बालि-बली, त्रास-त्रस्यो हौं।
चाहत अनाथ-नाथ! तेरी बाँह बस्यो हौं ॥ ४ ॥

महा मोह-रावन बिभीषन ज्यों हयो हौं।
त्राहि, तुलसीस! त्राहि तिहूँ ताप तयो हौं ॥ ५ ॥

१८२

नाथ ! गुननाथ सुनि होत चित चाउ सो।
राम रीझिबेको जानौं भगति न भाउ सो ॥ १ ॥

करम,सुभाउ,काल, ठाकुर न ठाउँ सो।
सुधन न, सुतन न,सुमन, सुआउ सो ॥ २ ॥

जाँचौं जल जाहि कहै अमिय पियाउ सो।
कासों कहौं काहू सों न बढ़त हियाउ सो ॥ ३ ॥

बाप! बलि जाऊँ, आप करिये उपाउ सो।
तेरे ही निहारे परै हारेहू सुदाउ सो ॥ ४ ॥

तेरे ही सुझाये सूझै असुझ सुझाउ सो।
तेरे ही बुझाये बूझै अबुझ बुझाउ सो ॥ ५ ॥

नाम अवलंबु-अंबु दीन मीन-राउ सो।
प्रभुसों बनाइ कहौं जीह जरि जाउ सो ॥ ६ ॥

सब भाँति बिगरी है एक सुबनाउ-सो।
तुलसी सुसाहिबहिं दियो है जनाउ सो ॥ ७ ॥

राग आसावरी

१८३

राम! प्रीतिकी रीति आप नीके जनियत है।
बड़े की बड़ाई, छोटे की छोटाई दूरि करै,
ऐसी बिरुदावली, बलि, बेद मनियत है ॥ १ ॥

गीधको कियो सराध, भीलनीको खायो फल,
सोऊ साधु-सभा भलीभाँति भनियत है।
रावरे आदरे लोक बेद हूँ आदरियत,
जोग ग्यान हूँ तें गरू गनियत है ॥ २ ॥

प्रभुकी कृपा कृपालु! कठिन कलि हूँ काल,
महिमा समुझि उर अनियत है।
तुलसी पराये बस भये रस अनरस,
दीनबंधु! द्वारे हठ ठनियत है ॥ ३ ॥

१८४

राम-नामके जपे जाइ जियकी जरनि।
कलिकाल अपर उपाय ते अपाय भये,
जैसे तम नासिबेको चित्रके तरनि ॥ १ ॥

करम-कलाप परिताप पाप-साने सब,
ज्यों सुफूल फूले तरु फोकट फरनि।
दंभ,लोभ,लालच,उपासना बिनासि नीके,
सुगति साधन भई उदर भरनि ॥ २ ॥

जोग न समाधि निरुपाधि न बिराग-ग्यान,
बचन बिशेष बेष, कहूँ न करनि।
कपट कुपथ कोटि, कहनि-रहनि खोटि,
सकल सराहैं निज निज आचरनि ॥ ३ ॥

मरत महेस उपदेस हैं कहा करत,
सुरसरि-तीर कासी धरम-धरनि।
राम-नामको प्रताप हर कहैं, जपैं आप,
जुग जुग जानैं जग, बेदहूँ बरनि ॥ ४ ॥

मति राम-नाम ही सों, रति राम-नाम ही सों,
गति राम नाम ही की बिपति-हरनि।
राम-नामसों प्रतीति प्रीति राखे कबहुँक,
तुलसी ढरैंगे राम आपनी ढरनि ॥ ५ ॥

१८५

लाज न लागत दास कहावत।
सो आचरन बिसारि सोच तजि, जो हरि तुम कहँ भावत ॥ १ ॥

सकल संग तजि भजत जाहि मुनि, जप तप जाग बनावत।
मो-सम मंद महाखल पाँवर, कौन जतन तेहि पावत ॥ २ ॥

हरि निरमल, मलग्रसित हृदय, असमंजस मोहि जनावत।
जेहि सर काक कंक बक सूकर, क्यों मराल तहँ आवत ॥ ३ ॥

जाकी सरन जाइ कोबिद दारुन त्रयताप बुझावत।
तहूँ गये मद मोह लोभ अति, सरगहुँ मिटत न सावत ॥ ४ ॥

भव-सरिता कहँ नाउ संत, यह कहि औरनि समुझावत।

हौं तिनसों हरि! परम बैर करि ,तुम सों भलो मनावत ॥ ५ ॥

नाहिंन और ठौर मो कहँ, ताते हठि नातो लावत।
राखु सरन उदार-चूडामनि! तुलसिदास गुन गावत ॥ ६ ॥

१८६

कौन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय मानि जानि डरिये ॥ १ ॥

जेहि साधन हरि! द्रवहु जानि जन सो हठि परिहरिये।
जाते बिपति-जाल निसिदिन दुख,तेहि पथ अनसरिये ॥ २ ॥

जानत हूँ मन बचन करम पर-हित कीन्हें तरिये।
सो बिपरीत देखि पर-सुख, बिनु कारन ही जरिये ॥ ३ ॥

श्रुति पुरान सबको मत यह सतसंग सुदृढ धरिये।
निज अभिमान मोह इरिषा बस तिनहिं न आदरिये ॥ ४ ॥

संतत सोइ प्रिय मोहिं सदा जातें भवनिधि परिये।
कहौं अब नाथ, कौन बलतें संसार-सोग हरिये ॥ ५ ॥

जब कब निज करुना-सुभावतें, द्रवहु तौ निस्तरिये।
तुलसिदास बिस्वास आनि नहिं, कत पचि-पचि मरिये ॥ ६ ॥

१८७

ताहि तें आयो सरन सबेरें।
ग्यान बिराग भगति साधन कछु सपनेहुँ नाथ! न मेरें ॥ १ ॥

लोभ-मोह-मद-काम-क्रोध रिपु फिरत रैनि-दिन घेरें।
तिनहिं मिले मन भयो कुपथ-रत, फिरै तिहारेहि फेरें ॥ २ ॥

दोष-निलय यह बिषय सोक-प्रद कहत संत श्रुति टेरें।
जानत हूँ अनुराग तहाँ अति सो, हरि तुम्हरेहि प्रेरें ? ॥ ३ ॥

बिष पियूष सम करहु अगिनि हिम, तारि सकहु बिनु बेरें।
तुम सम ईस कृपालु परम हित पुनि न पाइहौं हेरें ॥ ४ ॥

यह जिय जानि रहौं सब तजि रघुबीर भरोसे तेरें।
तुलसिदास यह बिपति बागुरौ तुम्हहिं सों बनै निबेरें ॥ ५ ॥

१८८

मैं तोहिं अब जान्यो संसार।
बाँधि न सकहिं मोहि हरिके बल,प्रगट कपट-आगार ॥ १ ॥

देखत ही कमनीय, कछू नाहिंन पुनि किये बिचार।
ज्यों कदलीतरु-मध्य निहारत, कबहुँ न निकसत सार ॥ २।

तेरे लिये जनम अनेक मैं फिरत न पायों पार।
महामोह-मृगजल-सरिता महँ बोर् यो हौं बारहिं बार ॥ ३ ॥

सुनु खल! छल बल कोटि किये बस होहिं न भगत उदार।
सहित सहाय तहाँ बसि अब ,जेहि हृदय न नंदकुमार ॥ ४ ॥

तासों करहु चातुरी जो नहिं जानै मरम तुम्हार।
सो परि डरै मरै रजु-अहि तें, बूझै नहिं ब्यवहार ॥ ५ ॥

निज हित सुनु सठ!हठ न करहि,जो चहहि कुसल परिवार।
तुलसिदास प्रभुके दासनि तजि भजहि जहाँ मद मार ॥ ६ ॥

राग गौरी

१८९

राम कहत चलु, राम कहत चलु, राम कहत चलु भाई रे।
नाहिं तौ भव-बेगारि महँ परिहै, छूटत अति कठिनाई रे ॥ १ ॥

बाँस पुरान साज-सब अठकठ, सरल तिकोन खटोला रे।
हमहिं दिहल करि कुटिल करमचँद मंद मोल बिनु डोला रे ॥ २ ॥

बिषम कहार मार-मद-माते चलहिं न पाउँ बटोरा रे।
मंद बिलंद अभेरा दलकन पाइय दुख झकझौरा रे ॥ ३ ॥

काँट कुराय लपेटन लोटन ठावहिं ठाउँ बझाऊ रे।
जस जस चलिय दूरि तस तस निज बास न भेंट लगाऊ रे ॥ ४ ॥

मारग अगम, संग नहिं संबल,नाउँ गाउँकर भूला रे।
तुलसिदास भव त्रास हरहु अब ,होहु राम अनुकूला रे ॥ ५ ॥

१९०

सहज सनेही रामसों तैं कियो न सहज सनेह।

तातें भव-भाजन भयो,सुनु अजहुँ सिखावन एह ॥ १ ॥

ज्यों मुख मुकुर बिलोकिये अरु चित न रहै अनुहारि।
त्यों सेवतहुँ न आपने, ये मातु-पिता, सुत-नारि ॥ २ ॥

दै दै सुमन तिल बासिकै, अरु खरि परिहरि रस लेत।
स्वारथ हित भूतल भरे, मन मेचक, तन सेत ॥ ३ ॥

करि बीत्यो, अब करतु है करिबे हित मीत अपार।
कबहुँ न कोउ रघुबीर सो नेह निबाहनिहार ॥ ४ ॥

जासों सब नातों फुरै, तासों न करी पहिचानि।
तातें कछू समझ्यो नहीं, कहा लाभ कह हानि ॥ ५ ॥

साँचो जान्यो झूठको,झूठे कहँ साँचो जानि।
को न गयो, को जात है,को न जैहै करि हितहानि ॥ ६ ॥

बेद कह्यो, बुध कहत हैं, अरु हौहुँ कहत हौं टेरि।
तुलसी प्रभु साँचो हितू, तू हियकी आँखिन हेरि ॥ ७ ॥

१९१

एक सनेही साचिलो केवल कोसलपालु।
प्रेम-कनोड़ो रामसो नहिं दूसरो दयालु ॥ १ ॥

तन-साथी सब स्वारथी, सुर ब्यवहार-सुजान।
आरत-अधम-अनाथ हित को रघुबीर समान ॥ २ ॥

नाद निठूर, समचर सिखी, सलिल सनेह न सूर।
ससि सरोग, दिनकरुबड़े, पयद प्रेम-पथ कूर ॥ ३ ॥

जाको मन जासों बँध्यो, ताको सुखदायक सोइ।
सरल सील साहिब सदा सीतापति सरिस न कोइ ॥ ४ ॥

सुनि सेवा सही को करै, परिहरै को दूषन देखि।
केहि दिवान दिन दीन को आदर-अनुराग बिसेखि ॥ ५ ॥

खग-सबरी पितु-मातु ज्यों माने, कपि को किये मीत।
केवट भेंट्यों भरत ज्यो, ऐसो को कहु पतित-पुनीत ॥ ६ ॥

देह अभागहिं भागु को, को राखै सरन सभीत।

बेद-बिदित बिरुदावली, कबि-कोबिद गावत गीत ॥ ७ ॥

कैसेउ पाँवर पातकी, जेहि लई नामकी ओट।
गाँठी बाँध्यो दाम तो, परख्यो न फेरि खर-खोट ॥ ८ ॥

मन मलीन, कलि किलबिषी होत सुनत जासु कृत-काज।
सो तुलसी कियो आपुनो रघुबीर गरीब-निवाज ॥ ९ ॥

१९२

जो पै जानकिनाथ सों नातो नेहु न नीच।
स्वारथ-परमारथ कहा, कलि कुटिल बिगोयो बीच ॥ १ ॥

धरम बरन आश्रमनिके पैयत पोथिही पुरान।
करतब बिनु बेष देखिये, ज्यों सरीर बिनु प्रान ॥ २ ॥

बिहित
बेद—साधन सबै, सुनियत दायक फल चारि।
बिदित
राम प्रेम बिनु जानिबो जैसे सर-सरिता बिनु बारि ॥ ३ ॥

नाना पथ निरबानके, नाना बिधान बहु भाँति।
तुलसी तू मेरे कहे जपु राम-नाम दिन-राति ॥ ४ ॥

१९३

अजहुँ आपने रामके करतब समुझत हित होइ।
कहँ तू, कहँ कोसलधनी, तोको कहा कहत सब कोइ ॥ १ ॥

रीझि निवाज्यो कबहिं तू, कब खीझि दई तोहिं गारि।
दरपन बदन निहारिकै, सुबिचारि मान हिय हारि ॥ २ ॥

बिगरी जनम अनेककी सुधरत पल लगै न आधु।
'पाहि कृपानिधि' प्रेमसों कहे को न राम कियो साधु ॥ ३ ॥

बालमीकि-केवट-कथा, कपि-भील-भालु-सनमान।
सुनि सनमुख जो न रामसों, तिहि को उपदेसहि ग्यान ॥ ४ ॥

का सेवा सुग्रीवकी, का प्रीति-रीति-निरबाहु।
जासु बंधु बध्यो ब्याध ज्यों, सो सुनत सोहात न काहु ॥ ५ ॥

भजन बिभीषनको कहा, फल कहा दियो रघुराज।
राम गरीब-निवाजके बड़ी बाँह-बोलकी लाज ॥ ६ ॥

जपहि नाम रघुनाथको, चरचा दूसरी न चालु।
सुमुख,सुखद,साहिब,सुधी,समरथ,कृपालु,नतपालु ॥ ७ ॥

सजल नयन,गदगदगिरा, गहबर मन,पुलक सरीर।
गावत गुनगन रामके केहिकी न मिटी भव-भीर ॥ ८ ॥

प्रभु कृतग्य सरबस्य हैं,परिहरु पाछिली गलानि।
तुलसी तोसों रामसों कछु नई न जान-पहिचानि ॥ ९ ॥

१९४

जो अनुराग न राम सनेही सों।
तौ लह्यो लाहु कहा नर-देही सों ॥ १ ॥

जो तनु धरि, परिहरि सब सुख, भये सुमति राम-अनुरागी।
सो तनु पाइ अघाइ किये अघ, अवगुन-उदधि अभागी ॥ २ ॥

ग्यान-बिराग,जोग-जप,तप-मख,जग मुद-मग नहिं थोरे।
राम-प्रेम बिनु नेम जाय जैसे मृग-जल-जलधि-हिलोरे ॥ ३ ॥

लोक-बिलोकि, पुरान-बेदि सुनि, समुझि-बूझि गुरु-ग्यानी।
प्रीति-प्रतीति राम-पद-पंकज सकल-सुमंगल-खानी ॥ ४ ॥

अजहुँ जानि जिय, मानि हारि हिय, होइ पलक महँ नीको।
सुमिरु सनेहसहित हित रामहिं, मानु मतो तुलसीको ॥ ५ ॥

१९५

बलि जाउँ हौं राम गुसाईं।कीजे कृपा आपनी नाईं ॥ १ ॥

परमारथ सुरपुर-साधन सब स्वारथ सुखद भलाई।
कलि सकोप लोपी सुचाल, निज कठिन कुचाल चलाई ॥ २ ॥

जहँ जहँ चित चितवत हित, तहँ नित नव बिषाद अधिकाई।
रुचि-भावती भभरि भागहि, समुहाहिं अमित अनभाई ॥ ३ ॥

आधि-मगन मन, ब्याधि-बिकल तन,बचन मलीन झुठाई।
एतेहुँ पर तुमसों तुलसीकी प्रभु सकल सनेह सगाई ॥ ४ ॥

१९६

काहेको फिरत मन, करत बहु जतन,
मिटै न दुख बिमुख रघुकुल-बीर।
कीजै जो कोटि उपाइ,त्रिबिध ताप न जाइ,
कह्यो जो भुज उठाय मुनिबर कीर ॥ १ ॥

सहज टेव बिसारि तुही धौं देखु बिचारि,
मिलै न मथत बारि घृत बिनु छीर।
समुझि तजहि भ्रम, भजहि पद-जुगम,
सेवत सुगम, गुन गहन गंभीर ॥ २ ॥

आगम निगम ग्रंथ, रिषि-मुनि, सुर-संत,
सब ही को एक मत सुनु, मतिधीर।
तुलसिदास प्रभु बिनु पियास मरै पसु,
जद्यपि है निकट सुरसरि-तीर ॥ ३ ॥

१९७

नाहिन चरन-रति ताहि तें सहौं बिपति,
कहत श्रुति सकल मुनि मतिधीर।
बसै जो ससि-उछंग सुधा-स्वादित कुरंग,
ताहि क्यों भ्रम निरखि रबिकर-नीर ॥ १ ॥

सुनिय नाना पुरान, मिटत नाहिं अग्यान,
पढ़िय न समुझिय जिमि खग कीर।
बँधत बिनहिं पास सेमर-सुमन-आस,
करत चरत तेइ फल बिनु हीर ॥ २ ॥

कछु न साधन-सिधि, जानौं न निगम-बिधि,
नहिं जप-तप, बस मन, न समीर।
तुलसिदास भरोस परम करुना-कोस,
प्रभु हरिहैं बिषम भवभीर ॥ ३ ॥

राग भैरवी

१९८

मन पछितैहै अवसर बीते।

दुरलभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, बचन अरु ही ते ॥ १ ॥

सहसबाहु दसबदन आदि नृप बचे न काल बलीते।
हम-हम करि धन-धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते ॥ २ ॥

सुत बनितादि जानि स्वारथरत, न करु नेह सबही ते।
अंतहु तोहिं तजैंगे पामर! तू न तजै अबही ते ॥ ३ ॥

अब नाथहिं अनुरागु, जागु जड़, त्यागु दुरासा जी ते।
न
बुझे—-काम अगिनि तुलसी कहुँ, बिषय-भोग बहु घी ते ॥ ४ ॥

कि

१९९

काहे को फिरत मूढ़ मन धायो।
तजि हरि-चरन-सरोज सुधारस, रबिकर-जल लय लायो ॥ १ ॥

त्रिजग देव नर असुर अपर जग जोनि सकल भ्रमि आयो।
गृह बनिता, सुत, बंधु भये बहु, मातु-पिता जिन्ह जायो ॥ २ ॥

जाते निरय-निकाय निरंतर, सोइ इन्ह तोहि सिखायो।
तुव हित होइ, कटै भव-बंधन, सो मगु तोहि न बतायो ॥ ३ ॥

अजहुँ बिषय कहँ जतन करत, जद्यपि बहुबिधि डहँकायो।
पावक-काम भोग-घृत तें सठ, कैसे परत बुझायौ ॥ ४ ॥

बिषयहीन दुख, मिले बिपति अति, सुख सपनेहुँ नहिं पायो।
उभय प्रकार प्रेत-पावक ज्यों धन दुखप्रद श्रुति गायो ॥ ५ ॥

छिन-छिन छीन होत जीवन, दुरलभ तनु बृथा गँवायो।
तुलसिदास हरि भजहि आस तजि, काल -उरग जग खायो ॥ ६ ॥

२००

ताँबे सो पीठि मनहुँ तन पायो।
नीच,मीच जानत न सीस पर, ईस निपट बिसरायो ॥ १ ॥

अवनि रवनि, धन-धाम, सुहृद-सुत, को न इन्हहिं अपनायो ?
काके भये, गये सँग काके, सब सनेह छल-छायो ॥ २ ॥

जिन्ह भूपनि जग-जीति, बाँधि जम, अपनी बाँह बसायो।
तेऊ काल कलेऊ कीन्हे, तू गिनती कब आयो ॥ ३ ॥

देखु बिचारि, सार का साँचो,कहा निगम निजु गायो।
भजिहिं न अजहुँ समुझि तुलसी तेहि,जेहि महेस मन लायो ॥ ४ ॥

२०१

लाभ कहा मानुष-तनु पाये।
काय-बचन-मन सपनेहुँ कबहुँक घटत न काज पराये ॥ १ ॥

जो सुख सुरपुर-नरक, गेह-बन आवत बिनहिं बुलाये।
तेहि सुख कहँ बहु जतन करत मन, समुझत नहिं समुझाये ॥ २ ॥

पर-दारा, परद्रोह, मोहबस किये मूढ मन भाये।
गरभबास दुखरासि जातना तीब्र बिपति बिसराये ॥ ३ ॥

भय-निद्रा, मैथुन-अहार, सबके समान जग जाये।
सुर-दुरलभ तनु धरि न भजे हरि मद अभिमान गवाँये ॥ ४ ॥

गई न निज-पर-बुद्धि सुद्ध ह्वै रहे न राम-लय लाये।
तुलसिदास यह अवसर बीते का पुनि के पछिताये ॥ ५ ॥

२०२

काजु कहा नरतनु धरि सार् यो।
पर-उपकार सार श्रुतिको जो, सो धोखेहु न बिचार् यो ॥ १ ॥

द्वैत मूल, भय-सूल, सोक-फल, भवतरु टरै न टार् यौ।
रामभजन-तीछन कुठार लै सो नहिं काटि निवार् यो ॥ २ ॥

संसय-सिंधु नाम बोहित भजि निज आतमा न तार् यो।
जनम अनेक विवेकहीन बहु जोनि भ्रमत नहिं हार् यो ॥ ३ ॥

देखि आनकि सहज संपदा द्वेष-अनल मन-जार् यो।
सम,दम,दया,दीन-पालन, सीतल हिय हरि न सँभार् यो ॥ ४ ॥

प्रभु गुरु पिता सखा रघुपति तैं मन क्रम बचन बिसार् यो।
तुलसिदास यहि आस, सरन राखिहि जेहि गीध उधार् यो ॥ ५ ॥

२०३

श्रीहरि-गुरु-पद-कमल भजहु मन तजि अभिमान।
जेहि सेवत पाइय हरि सुख-निधान भगवान ॥ १ ॥

परिवा प्रथम प्रेम बिनु राम-मिलन अति दूरि।
जद्यपि निकट हृदय निज रहे सकल भरिपूरि ॥ २ ॥

दुइज द्वेत-मति छाड़ि चरहि महि-मंडल धीर।
बिगत मोह-माया-मद हृदय बसत रघुबीर ॥ ३ ॥

तीज त्रिगुन-पर परम पुरुष श्रीरमन मुकुंद।
गुन सुभाव त्यागे बिनु दुरलभ परमानंद ॥ ४ ॥

चौथि चारि परिहरहु बुद्धि-मन-चित-अहंकार।
बिमल बिचार परमपद निज सुख सहज उदार ॥ ५ ॥

पाँचइ पाँच परस,रस,सब्द,गंध अरु रूप।
इन्ह कर कहा न कीजिये, बहुरि परब भव-कूप ॥ ६ ॥

छठ षटबरग करिय जय जनकसुता-पति लागि।
रघुपति-कृपा-बारि बिनु नहीं बुताइ लोभागि ॥ ७ ॥

सातैं सप्तधातु-निरमित तनु करिय बिचार।
तेहि तनु केर एक फल, कीजै पर-उपकार ॥ ८ ॥

आठइँ आठ प्रकृति-पर निरबिकार श्रीराम।
केहि प्रकार पाइय हरि, हृदय बसहिं बहु काम ॥ ९ ॥

नवमी नवद्वार-पुर बसि जेहि न आपु भल कीन्ह।
ते नर जोनि अनेक भ्रमत दारून दुख लीन्ह ॥ १० ॥

दसइँ दसहु कर संजम जो न करिय जिय जानि।
साधन बृथा होइ सब मिलहिं न सारंगपानि। ११ ॥

एकादसी एक मन बस कै सेवहु जाइ।
सोइ ब्रत कर फल पावै आवागमन नसाइ ॥ १२ ॥

द्वादसि दान देहु अस, अभय होइ त्रेलोक।
परहित-निरत सो पारन बहुरि न ब्यापत सोक ॥ १३ ॥

तेरसि तीन अवस्था तजहु, भजहु भगवंत।
मन-क्रम-बचन-अगोचर, ब्यापक, ब्याप्य, अनंत ॥ १४ ॥

चौदसि चौदह भुवन अचर-चर-रूप गोपाल।
भेद गये बिनु रघुपति अति न हरहिं जग-जाल ॥ १५ ॥

पूनों प्रेम-भगति-रस हरि-रस जानहिं दास।
सम, सीतल, गत-मान, ग्यानरत, बिषय-उदास ॥ १६ ॥

त्रिबिध सूल होलिय जरे, खेलिय अब फागु।
जो जिय चहसि परमसुख, तौ यहि मारग लागु ॥ १७ ॥

श्रुति-पुरान-बुध-संमत चाँचरि चरित मुरारि।
करि बिचार भव तरिय, परिय न कबहुँ जमधारि ॥ १८ ॥

संसय-समन, दमन दुख, सुखनिधान हरि एक।
साधु-कृपा बिनु मिलहिं न, करिय उपाय अनेक ॥ १९ ॥

भव सागर कहँ नाव सुद्ध संतनके चरन।
तुलसिदास प्रयास बिनु मिलहिं राम दुखहरन ॥ २० ॥

राग कान्हरा

२०४

जो मन लागै रामचरन अस।
देह-गेह-सुत-बित-कलत्र महँ मगन होत बिनु जतन किये जस ॥ १ ॥

द्वंद्वरहित, गतमान, ग्यानरत, बिषय-बिरत खटाइ नाना कस।
सुखनिधान सुजान कोसलपति ह्वै प्रसन्न, कहु, क्यों न होंहि बस ॥ २ ॥

सर्वभूत-हित, निर्ब्यलीक चित, भगति-प्रेम दृढ़ नेम, एकरस।
तुलसिदास यह होइ तबहिं जब द्रवै ईस, जेहि हतो सीसदस ॥ ३ ॥

२०५

जो मन भज्यो चहै हरि-सुरतरु।
तौ तज बिषय-बिकार, सार भज, अजहूँ जो मैं कहौं सोइ करु ॥ १ ॥

सम,संतोष, बिचार बिमल अति, सतसंगति,यर चारि दृढ़ करि धरु।
काम- क्रोध अरु लोभ-मोह-मद, राग-द्वेष निसेष करि परिहरु ॥ २ ॥

श्रवन कथा, मुख नाम, हृदय हरि, सिर प्रनाम, सेवा कर अनुसरु।
नयननि निरखि कृपा-समुद्र हरि अग-जग-रूप भूप सीताबरु ॥ ३ ॥

इहै भगति, बैराग्य-ग्यान यह, हरि-तोषन यह सुभ ब्रत आचरु।
तुलसिदास सिव-मत मारग यहि चलत सदा सपनेहुँ नाहिंन डरु ॥ ४ ॥

२०६

नाहिन और कोउ सरन लायक दूजो श्रीरघुपति-सम बिपति-निवारन।
काको सहज सुभाउ सेवकबस, काहि प्रनत परप्रीति अकारन ॥ १ ॥

जन-गुन अलप गनत सुमेरु करि, अवगुन कोटि बिलोकि बिसारन।
परम कृपालु, भगत-चिंतामनि,बिरद पुनीत, पतितजन-तारन ॥ २ ॥

सुमिरत सुलभ,दास-दुख हरि चलत तुरत, पटपीत सँभार न।
साखि पुरान-निगम-अगम सब, जानत द्रुपद-सुता अरु बारन ॥ ३ ॥

जाको जस गावत कबि-कोबिद, जिन्हके लोभ-मोह,मद-मार न।
तुलसिदास तजि आस सकल भजु, कोसलपति मुनिबधू-उधारन ॥ ४ ॥

२०७

भजिबे लायक, सुखदायक रघुनायक सरिस सरनप्रद दूजो नाहिन।
आनँदभवन, दुखदवन, सोकसमन रमारमन गुन गनत सिराहिं न ॥ १ ॥

आरत, अधम, कुजाति, कुटिल, खल, पतित, सभीत कहुँ जे समाहिं न।
सुमिरत नाम बिबसहूँ बारक पावत सो पद, जहाँ सुर जाहिं न ॥ २ ॥

जाके पद-कमल लुब्ध मुनि-मधुकर, बिरत जे परम सुगतिहु लुभाहिं न।
तुलसिदास सठ तेहि न भजसि कस, कारुनिक जो अनाथहिं दाहिन ॥ ३ ॥

राग कल्याण

२०८

नाथ सों कौन बिनती कहि सुनावौं।
त्रिबिध बिधि अमित अवलोकि अघ आपने,
सरन सनमुख होत सकुचि सिर नावौं ॥ १ ॥

बिरचि हरिभगतिको बेष बर टाटिका,
कपट-दल हरित पल्लवनि छावौं।
नामलगि लाइ लासा ललित-बचन कहि,
ब्याध ज्यों बिषय-बिहँगनि बझावौं ॥ २ ॥

कुटिल सतकोटि मेरे रोमपर वारियहि,
साधु गनतीमें पहलेहि गनावौं।
परम बर्बर खर्ब गर्ब-पर्बत चढ्यो,
अग्य सर्बग्य,जन-मनि जनावौं ॥ ३।

साँच किधौं झूठ मोको कहत कोउ-
कोउ राम! रावरो, हौं तुम्हरो कहावौं।
बिरदकी लाज करि दास तुलसिहिं देव!
लेहु अपनाइ अब देहु जनि बावौ ॥ ४ ॥

२०९

नाहिनै नाथ! अवलंब मोहि आनकी।
करम-मन-बचन पन सत्य करुनानिधे!
एक। गति राम! भवदीय पदत्रानकी ॥ १ ॥

कोह-मद-मोह-ममतायतन जानि मन,
बात नहि जाति कहि ग्यान-बिग्यानकी।
काम-संकलप उर निरखि बहु बासनहिं,
आस नहिं एकहू आँक निरबानकी ॥ २ ॥

बेद-बोधित करम धरम बिनु अगम अति,
जदपि जिय लालसा अमरपुर जानकी।
सिद्ध-सुर-मनुज दनुजादिसेवत कठिन,
द्रवहिं हठजोग दिये भोग बलि प्रानकी ॥ ३ ॥

भगति दुरलभ परम, संभु-सुक-मुनि-मधुप,
प्यास पदकंज-मकरंद-मधुपानकी।
पतित-पावन सुनत नाम बिस्रामकृत,
भ्रमित पुनि समझि चित ग्रंथि अभिमानकी ॥ ४ ॥

नरक-अधिकार मम घोर संसार-तम-
कूपकहीं, भूप! मोहि सक्ति आपानकी।
दासतुलसी सोउ त्रास नहि गनत मन,
सुमिरि गुह गीध गज ग्याति हनुमानकी ॥ ५ ॥

२१०

औरु कहँ ठौरु रघुबंस-मनि! मेरे।
पतित-पावन प्रनत-पाल असरन-सरन,
बाँकुरे बिरुद बिरुदैत केहि केरे ॥ १ ॥

समुझि जिय दोस अति रोस करि राम जो,
करत नहिं कान बिनती बदन फेरे।
तदपि ह्वै निडर हौं कहौं करुना-सिंधु,
क्योंऽब रहि जात सुनि बात बिनु हेरे ॥ २ ॥

मुख्य रुचि बसिबेकी पुर रावरे,
राम! तेहि रुचिहि कामादि गन घेरे।
अगम अपबरग, अरु सरग सुकृतैकफल,
नाम-बल क्यों बसौं जम-नगर नेरे ॥ ३ ॥

कतहुँ नहिं ठाउँ, कहँ जाउँ कोसलनाथ!
दीन बितहीन हौं, बिकल बिनु डेरे।
दास तुलसिहि बास देहु अब करि कृपा,
बसत गज गीध ब्याधादि जेहि खेरे ॥ ४ ॥

२११

कबहुँ रघुबंसमनि ! सो कृपा करहुगे।
जेहि कृपा ब्याध, गज, बिप्र, खल नर तरे,
तिन्हहि सम मानि मोहि नाथ उद्धरहुगे ॥ १ ॥

जोनि बहु जनमि किये करम खल बिबिध बिधि,
अधम आचरन कछु हृदय नहि धरहुगे।
दीनहित! अजित सरबग्य समरथ प्रनतपालि,
चित मृदुल निज गुननि अनुसरहुगे ॥ २ ॥

मोह-मद-मान-कामादि खलमंडली,
सकुल निरमूल करि दुसह दुख हरहुगे।
जोग-जप-जग्य-बिग्यान ते अधिक अति,
अमल दृढ़ भगति दै परम सुख भरहुगे ॥ ३ ॥

मंदजन-मौलिमनि सकल, साधनहीन,
कुटिल मन, मलिन जिय जानि जो डरहुगे।

दासतुलसी बेद-बिदित बिरुदावली,
बिमल जस नाथ! केहि भाँति बिस्तरहुगे ॥ ४ ॥

राग केदारा

२१२

रघुपति बिपति-दवन।
परम कृपालु, प्रनत-प्रतिपालक, पतित-पावन ॥ १ ॥

कूर, कुटिल, कुलहीन,दीन,अति मलिन जवन।
सुमिरत नाम राम पठये सब अपने भवन ॥ २ ॥

गज-पिंगला-अजामिल-से खल गनै धौं कवन।
तुलसिदास प्रभु केहि न दीन्हि गति जानकी-रवन ॥ ३ ॥

२१३

हरि-सम आपदा-हरन।
नहि कोउ सहज कृपालु दुसह दुख-सागर-तरन ॥ १ ॥

गज निज बल अवलोकि कमल गहि गयो सरन।
दीन बचन सुनि चले गरुड़ तजि सुनाभ-धरन ॥ २ ॥

द्रुपदसुताको लग्यो दुसासन नगन करन।
'हा हरि पाहि' कहत पूरे पट बिबिध बरन ॥ ३ ॥

इहे जानि सुर-नर-मुनि-कोबिद सेवत चरन।
तुलसिदास प्रभु को न अभय कियो नृग-उद्धरन ॥ ४ ॥

राग कल्यान

२१४

ऐसी कौन प्रभुकी रीति ?
बिरद हेतु पुनीत परिहरि पाँवरनि पर प्रीति ॥ १ ॥

गई मारन पूतना कुच कालकूट लगाई।
मातुकी गति दई ताहि कृपालु जादवराइ ॥ २ ॥

काममोहित गोपिकनिपर कृपा अतुलित कीन्ह।
जगत-पिता बिरंचि जिन्हके चरनकी रज लीन्ह ॥ ३ ॥

नेमतें सिसुपाल दिन प्रति देत गनि गनि गारि।
कियो लीन सु आपमें हरि राज-सभा मँझारि ॥ ४ ॥

ब्याध चित दै चरन मार् यो मूढमति मृग जानि।
सो सदेह स्वलोक पठयो प्रगट करि निज बानि ॥ ५ ॥

कौन तिन्हकी कहै जिन्हके सुकृत अरु अघ दोउ।
प्रगट पातकरूप तुलसी सरन राख्यो सोउ ॥ ६ ॥

२१५

श्रीरघुबीरकी यह बानि।
नीचहू सों करत नेह सुप्रीति मन अनुमानि ॥ १ ॥

परम अधम निषाद पाँवर, कौन ताकी कानि ?
लियो सो उर लाइ सुत ज्यौं प्रेमको पहिचानि ॥ २ ॥

गीध कौन दयालु, जो बिधि रच्यो हिंसा सानि ?
जनक ज्यों रघुनाथ ताकहँ दियो जल निज पानि ॥ ३ ॥

प्रकृति-मलिन कुजाति सबरी सकल अवगुन-खानि।
खात ताके दिये फल अति रुचि बखानि बखानि ॥ ४ ॥

रजनिचर अरु रिपु बिभीषन सरन आयो जानि।
भरत ज्यों उठि ताहि भेंटत देह-दसा भुलानि ॥ ५ ॥

कौन सुभग सुसील बानर, जिनहिं सुमिरत हानि।
किये ते सब सखा, पूजे भवन अपने आनि ॥ ६ ॥

राम सहज कृपालु कोमल दीनहित दिनदानि।
भजहि ऐसे प्षभुहि तुलसी कुटिल कपट न ठानि ॥ ७ ॥

२१६

हरि तज और भजिये काहि ?
नाहिनै कोउ राम सो ममता प्रनतपर जाहि ॥ १ ॥

कनककसिपु बिरंचिको जन करम मन अरु बात।
सुतहिं दुखवत बिधि न बरज्यो कालके घर जात ॥ २ ॥

संभु-सेवक जान जग, बहु बार दिये दस सीस।

करत राम-बिरोध सो सपनेहु न हटक्यो ईस ॥ ३ ॥

और देवनकी कहा कहौं, स्वारथहिके मीत।
कबहु काहु न राख लियो कोउ सरन गयउ सभीत ॥ ४ ॥

को न सेवत देत संपति लोकहू यह रीति।
दासतुलसी दीनपर एक राम ही की प्रीति ॥ ५ ॥

२१७

जो पै दूसरो कोउ होइ।
तौ हौं बारहि बार प्रभु कत दुख सुनावौं रोइ ॥ १ ॥

काहि ममता दीनपर, काको पतितपावन नाम।
पापमूल अजामिलहि केहि दियो अपनो धाम ॥ २ ॥

रहे संभु बिरंचि सुरपति लोकपाल अनेक।
सोक-सरि बूडत करीसहि दई काहु न टेक ॥ ३ ॥

बिपुल-भूपति-सदहि महँ नर-नारि कह्यो 'प्रभु पाहि'।
सकल समरथ रहे, काहु न बसन दीन्हों ताहि ॥ ४ ॥

एक मुख क्यों कहौं करुनासिंधुके गुन-गाथ ?
भक्तहित धरि देह काह न कियो कोसलनाथ! ॥ ५ ॥

आपसे कहुँ सौंपिये मोहि जो पै अतिहि घिनात।
दासतुलसी और बिधि क्यों चरन परिहरि जात ॥ ६ ॥

२१८

कबहि देखाइहौ हरि चरन।
समन सकल कलेस कलि-मल ,सकल मंगल- करन ॥ १ ॥

सरद-भव सुंदर तरुनतर अरुन-बारिज-बरन।
लच्छि-लालित-ललित करतल छबि अनूपम धरन ॥ २ ॥

गंग-जनक अनंग-अरि-प्रिय कपट-बटु बलि-छरन।
बिप्रतिय नृग बधिकके दुख-दोस दारुन दरन ॥ ३।

सिद्ध-सुर-मुनि-बृंद-बंदित सुखद सब कहँ सरन।
सकृत उर आनत जिनहिं जन होत तारन-तरन ॥ ४ ॥

कृपासिंधु सुजान रघुबर प्रनत-आरति-हरन।
दरस-आस-पियास तुलसीदास चाहत मरन ॥ ५ ॥

२१९

द्वार हौं भोर ही को आजु।
रटत रिरिहा आरि और न, कौर ही तें काजु ॥ १ ॥

कलि कराल दुकाल दारुन, सब कुभाँति कुसाजु।
नीच जन, मन ऊँच जैसी कोढ़ँमेंकी खाजु ॥ २ ॥

हहरि हियमें सदय बूझ्यो जाइ साधु-समाजु।
मोहुसे कहुँ कतहुँ कोउ, तिन्ह कह्यो कोसलराजु ॥ ३ ॥

दीनता-दारिद दलै को कृपाबारिधि बाजु।
दानि दसरथरायके, तू बानइत सिरताजु ॥ ४ ॥

जनमको भूखो भिखारी हौं गरीबनिवाजु।
पेट भरि तुलसिहि जेंवाइय भगति-सुधा सुनाजु ॥ ५ ॥

२२०

करिय सँभार, कोसलराय!
और ठौर न और गति, अवलंब नाम बिहाय ॥ १ ॥

बूझि अपनी आपनो हितु आप बाप न माय।
राम! राउर नाम गुर,सुर,स्वामि,सखा,सहाय ॥ २ ॥

रामराज न चले मानस-मलिनके छल छाय।
कोप तेहि कलिकाल कायर मुएहि घालत घाय ॥ ३ ॥

लेत केहरिको बयर ज्यों भैक हनि गोमाय।
त्योंहि राम-गुलाम जानि निकाम देत कुदाय ॥ ४ ॥

अकनि याके कपट-करतब, अमित अनय-अपाय।
सुखि हरिपुर बसत होत परीछितहि पछिताय ॥ ५ ॥

कृपासिंधु! बिलोकिये, जन-मनकी साँसति साय।
सरन आयो, देव! दीनदयालु! देखन पाय ॥ ६ ॥

निकट बोलि न बरजिये, बलि जाउँ, हनिय न हाय।

देखिहैं हनुमान गोमुख नाहरनिके न्याय ॥ ७ ॥

अरुन मुख, भ्रू बिकट, पिंगल नयन रोष-कषाय।
बीर सुमिरि समीरको घटिहै चपल चित चाय ॥ ८ ॥

बिनय सुनि बिहँसे अनुजसों बचनके कहि भाय।
'भली कही' कह्यो लषन हूँ हँसि,बने सकल बनाय ॥ ९ ॥

दई दीनहिं दादि, सो सुनि सुजन-सदन बधाय।
मिटे संकट-सोच, पोच-प्रपंच, पाप-निकाय ॥ १० ॥

पेखि प्रीति-प्रतीति जनपर अगुन अनघ अमाय।
दासतुलसी कहत मुनिगन,'जयति जय उरुगाय' ॥ ११ ॥

२२१

नाथ! कृपाहीको पंथ चितवत दीन हौं दिनराति।
होइ धौं केहि काल दीनदयालु! जानि न जाति ॥ १ ॥

सुगुन, ग्यान-बिराग-भगति, सु-साधननिकी पाँति।
भजे बिकल बिलोकि कलि अघ-अवगुननिकी थाति ॥ २ ॥

अति अनीति-कुरीति भइ भुइँ तरनि ह्व ते ताति।
जाउँ कहँ ? बलि जाउँ, कहूँ न ठाउँ, मति अकुलाति ॥ ३ ॥

आप सहित न आपनो कोउ, बाप! कठिन कुभाँति।
स्यामघन! सींचिये तुलसी, सालि सफल सुखाति ॥ ४ ॥

२२२

बलि जाउँ, और कासों कहौं ?
सदगुनसिंधु स्वामि सेवक-हित कहुँ न कृपानिधि-सो लहौं ॥ १ ॥

जहँ जहँ लोभ लोल लालचबस निजहित चित चाहनि चहौं।
तहँ तहँ तरनि तकत उलूक ज्यों भटकि कुतरु-कोटर गहौं ॥ २ ॥

काल-सुभाउ-करम बिचित्र फलदायक सुनि सिर धुनि रहौं।
मोको तौ सकल सदा एकहि रस दुसह दाह दारुन दहौं ॥ ३ ॥

उचित अनाथ होइ दुखभाजन भयो नाथ! किंकर न हौं।
अब रावरो कहाइ न बूझिये, सरनपाल! साँसति सहौं ॥ ४ ॥

महाराज! राजीवबिलोचन! मगन-पाप-संताप हौं।
तुलसी प्रभु!जब तब जेहि तेहि बिधि राम निरबहौं ॥ ५ ॥

२२३

आपनो कबहुँ करि जानिहौ।
राम गरीबनिवाज राजमनि, बिरद-लाज उर आनिहौ ॥ १ ॥

सील-सिंधु,सुंदर,सब लायक,समरथ, सदगुन-खानि हौ।
पाल्यो है,पालत,पालहुगे प्रभु, प्रनत-प्रेम पहिचानिहौ ॥ २ ॥

बेद-पुरान कहत,जग जानत, दीनदयालु दिन-दानि हौ।
कहि आवत, बलि जाऊँ,मनहुँ मेरी बार बिसारे बानि हौ ॥ ३ ॥

आरत-दीन-अनाथनिके हित मानत लौकिक कानि हौ।
है परिनाम भलो तुलसीको सरनागत-भय-भानि हौ ॥ ४ ॥

२२४

रघुबरहि कबहुँ मन लागिहै ?
कुपथ,कुचाल,कुमति,कुमनोरथ, कुटिल कपट कब त्यागिहै ॥ १ ॥

जानत गरल अमिय बिमोहबस, अमिय गनत करि आगिहै।
उलटी रीति-प्रीति अपनेकी तजि प्रभुपद अनुरागिहै ॥ २ ॥

आखर अरथ मंजु मृदु मोदक राम-प्रेम-पगि पागिहै।
ऐसे गुन गाइ रिझाइ स्वामिसों पाइहै जो मुँह माँगिहै ॥ ३ ॥

तू यहि बिधि सुख-सयन सोइहै,जियकी जरनि भूरि भागिहै।
राम-प्रसाद दासतुलसी उर राम-भगति-जोग जागिहै ॥ ४ ॥

२२५

भरोसो और आइहै उर ताके।
कै कहुँ लहै जो रामहि-सो साहिब, कै अपनो बल जाके ॥ १ ॥

के कलिकाल कराल न सूझत, मोह-मार-मद छाके।
कै सुनि स्वामि-सुभाउ न रह्यो चित, जो हित सब अँग थाके ॥ २ ॥

हौं जानत भलिभाँति अपनपौ, प्रभु-सो सुन्यो न साके।
उपल,भील,खग,मृग रजनीचर, भले भये करतब काके ॥ ३ ॥

मोको भलो राम-नाम सुरतरु-सो, रामप्रसाद कृपालु कृपाके।
तुलसी सुखी निसोच राज ज्यों बालक माय-बबाके ॥ ४ ॥

२२६

भरोसो जाहि दूसरो सो करो।
मोको तो रामको नाम कलपतरु कलि कल्यान फरो ॥ १ ॥

करम उपासन,ग्यान,बेदमत, सो सब भाँति खरो।
मोहि तो 'सावनके अंधहि' ज्यों सूझत रंग हरों ॥ २ ॥

चाटत रह्यो स्वान पातरि ज्यों कबहुँ न पेट भरो।
सो हौं सुमिरत नाम-सुधारस पेखत परुसि धरो ॥ ३ ॥

स्वारथ औ परमारथ हू को नहि कुंजरो-नरो।
सुनियत सेतु पयोध पषाननि करि कपि कटक-तरो ॥ ४ ॥

प्रीति-प्रतीति जहाँ जाकी, तहँ ताको काज सरो।
मेरे तो माय-बाप दोउ आखर हौं सिसु-अरनि अरो ॥ ५ ॥

संकर साखि जो राखि कहौं कछु तौ जरि जीह गरो।
अपनो भलो राम-नामहि ते तुलसिहि समुझि परो ॥ ६ ॥

२२७

नाम राम रावरोई हित मेरे।
स्वारथ-परमारथ साथिन्ह सों भुज उठाइ कहौं टेरे ॥ १ ॥

जननि-जनक तज्यो जनमि, करम बिनु बिधिहु सृज्यो अवडेरे।
मोहुँसो कोउ-कोउ कहत रामहि को, सो प्रसंग केहि केरे ॥ ३२ ॥

फिर् यौ ललात बिनु नाम उदर लगि, दुखउ दुखित मोहि हेरे।
नाम-प्रसाद लहत रसाल फल अब हौं बबुर बहेरे ॥ ३ ॥

साधत साधु लोक-परलोकहि,सुनि गुनि जतन घनेरे।
तुलसीके अवलंब नामको, एक गाँठि कइ फेरे ॥ ४ ॥

२२८

प्रिय रामनामतें जाहि न रामो।
ताको भलो कठिन कलिकालहुँ आदि-मध्य-परिनामो ॥ १ ॥

सकुचत समुझि नाम-महिमा मद-लोभ-मोह-कोह-कामो।
राम-नाम-जप-निरत सुजन पर करत छाँह घोर घामो ॥ २ ॥

नाम-प्रभाउ सही जो कहै कोउ सिला सरोरुह जामो।
जो सुनि सुमिरि भाग-भाजन भइ सुकृतसील भील-भामो ॥ ३ ॥

बालमीकि-अजामिलके कछु हुतो न साधन सामो।
उलटे पलटे नाम-महातम गुंजनि जितो ललामो ॥ ४ ॥

रामतें अधिक नाम-करतब, जेहि किये नगर-गत गामो।
भये बजाइ दाहिने जो जपि तुलसिदाससे बामो ॥ ५ ॥

२२९

गरैगी जीह जो कहौं औरको हौं।
जानकी-जीवन! जनम-जनम जग ज्यायो तिहारेहि कौरको हौं ॥ १ ॥

तीनि लोक, तिहुँ काल न देखत सुहृद रावरे जोरको हौं।
तुमसों कपट करि कलप-कलप कृमि ह्वैहौं नरक घोरको हौं ॥ २ ॥

कहा भयो जो मन मिलि कलिकालहिं कियो भौंतुवा भौंरको हौं।
तुलसिदास सीतल नित यहि बल, बड़े ठेकाने ठौरको हौं ॥ ३ ॥

२३०

अकारन को हितू और को है।
बिरद 'गरीब-निवाज' कौनको, भौंह जासु जन जोहै ॥ १ ॥

छोटो-बड़ो चहत सब स्वारथ, जो बिरंचि बिरचो है।
कोल कुटिल, कपि-भालु पालिबो कौन कृपालुहि सोहै ॥ २ ॥

काको नाम अनख आलस कहें अघ अवगुननि बिछोहै।
को तुलसीसे कुसेवक संग्रह्यो, सठ सब दिन साईं द्रोहै ॥ ३ ॥

२३१

और मोहि को है, काहि कहिहौं ?
रंक-राज ज्यों मनको मनोरथ, केहि सुनाइ सुख लहिहौं ॥ १ ॥

जम-जातना,जोनि-संकट सब सहे दुसह अरु सहिहौं।
मोको अगम,सुगम तुमको प्रभु, तउ फल चारि न चहिहौं ॥ २ ॥

खेलिबेको खग-मृग,तरु-कंकर है रावरो राम हौं रहिहौं।
यहि नाते नरकहुँ सचु या बिनु परमपदहुँ दुख दहिहौं ॥ ३ ॥

इतनी जिय लालसा दासके, कहत पानही गहिहौं।
दीजै बचन कि हृदय आनिये 'तुलसिको पन निर्बहिहौ' ॥ ४ ॥

२३२

दीनबंधु दूसरो कहँ पावो ?
को तुम बिनु पर-पीर पाइ है ? केहि दीनता सुनावों ॥ १ ॥

प्रभु अकृपालु,कृपालु अलायक, जहँ-जहँ चितहिं डोलावों।
इहै समुझि सुनि रहौं मौन ही, कहि भ्रम कहा गवावों ॥ २ ॥

गोपद बुड़िबे जोग करम करौं, बातनि जलधि थहावों।
अति लालची,काम-किंकर मन, मुख रावरो कहावों ॥ ३ ॥

तुलसी प्रभु जियकी जानत सब, अपनो कछुक जनावों।
सो कीजै,जेहि भाँति छाँडि छल द्वार परो गुन गावों ॥ ४ ॥

२३३

मनोरथ मनको एकै भाँति।
चाहत मुनि-मन-अगम सुकृत-फल, मनसा अघ न अघाति ॥ १ ॥

करमभूमि कलि जनम,कुसंगति, मति बिमोह-मद-माति।
करत कुजोग कोटि, कयों पैयत परमारथ-पद सांति ॥ २ ॥

सेइ साधु-गुरु,सुनि पुरान-श्रुति बूझ्यो राग बाजी ताँति।
तुलसी प्रभु सुभाउ सुरतरु-सो, ज्यों दरपन मुख-कांति ॥ ३ ॥

२३४

जनम गयो बादिहिं बर बीति।
परमारथ पाले न पर् यो कछु, अनुदिन अधिक अनीति ॥ १ ॥

खेलत खात लरिकपन गो चलि, जौबन जुवतिन लियो जीति।
रोग-बियोग-सोग-श्रम-संकुल बड़ि बय बृथहि अतीति ॥ २ ॥

राग-रोष-इरिषा-बिमोह-बस रुची न साधु-समीति।
कहे न सुने गुनगन रघुबरके, भइ न रामपद-प्रीति ॥ ३ ॥

हृदय दहत पछिताय-अनल अब, सुनत दुसह भवभीति।
तुलसी प्रभु तें होइ सो कीजिय समुझि बिरदकी रीति ॥ ४ ॥

२३५

ऐसेहि जनम-समूह सिराने।
प्राननाथ रघुनाथ-से प्रभु तजि सेवत चरन बिराने ॥ १ ॥

जे जड जीव कुटिल,कायर,खल, केवल कलिमल-साने।
सूखत बदन प्रसंसत तिन्ह कहँ, हरितें अधिक करि माने ॥ २ ॥

सुख हित कोटि उपाय निरंतर करत न पायँ पिराने।
सदा मलीन पंथके जल ज्यो, कबहुँ न हृदय थिराने ॥ ३ ॥

यह दीनता दूर करिबेको अमित जतन उर आने।
तुलसी चित-चिंता न मिटै बिनु चिंतामनि पहिचाने ॥ ४ ॥

२३६

जो पै जिय जानकी-नाथ न जाने।
तौ सब करम-धरम श्रमदायक ऐसेइ कहत सयाने ॥ १ ॥

जे सुर, सिद्ध,मुनीस, जोगबिद बेद-पुरान बखाने।
पूजा लेत,देत पलटे सुख हानि-लाभ अनुमाने ॥ २ ॥

काको नाम धोखेहू सुमिरत पातकपुंज पराने।
बिप्र-बधिक, गज-गीध कोटि खल कौनके पेट समाने ॥ ३ ॥

मेरु-से दोष दूरि करि जनके, रेनु-से गुन उर आने।
तुलसिदास तेहि सकल आस तजि भजहि न अजहुँ अयाने ॥ ४ ॥

२३७

काहे न रसना, रामहि गावहि ?
निसदिन पर-अपवाद बृथा कत रटि-रटि राग बढ़ावहि ॥ १ ॥

नरमुख सुंदर मंदिर पावन बसि जनि ताहि लजावहि।
ससि समीप रहि त्यागि सुधा कत रबिकर-जल कहँ धावहि ॥ २ ॥

काम-कथा कलि-कैरव-चंदनि, सुनत श्रवन दै भावहि।
तिनहिं हटकि कहि हरि-कल-कीरति, करन कलंक नसावहि ॥ ३ ॥

जातरूप मति, जुगति रुचिर मनि रचि-रचि हार बनावहि।
सरन-सुखद रबिकुल-सरोज-रबि राम-नृपहि पहिरावहि ॥ ४ ॥

बाद-बिबाद, स्वाद तजि भजि हरि, सरस चरित चित लावहि।
तुलसिदास भव तरहि, तिहुँ पुर तू पुनीत जस पावहि ॥ ५ ॥

२३८

आपनो हित रावरेसों जो पै सूझै।
तौ जनु तनुपर अछत सीस सुधि क्यों कबंध ज्यों जूझै ॥ १ ॥

निज अवगुन,गुनराम! रावरे लखि-सुनि-मति-मन-रूझै।
रहनि-कहनि-समुझनि तुलसीकी को कृपालु बिनु बूझै ॥ २ ॥

२३९

जाको हरि दृढ करि अंग कर् यो।
सोइ सुसील,पुनीत,बेदबिद, बिद्या-गुननि भर् यो ॥ १ ॥

उतपति पांडु-सुतनकी करनी सुनि सतपंथ डर् यो।
ते त्रैलोक्य-पूज्य, पावन जस सुनि-सुनि लोक तर् यो ॥ २ ॥

जो निज धरम बेदबोधित सो करत न कछु बिसर् यो।
बिनु अवगुन कृकलास कूप मज्जित कर गहि उधर् यो ॥ ३ ॥

ब्रह्म बिसिख ब्रह्मांड दहन छम गर्भ न नृपति जर् यो।
अजर-अमर, कुलिसहुँ नाहिंन बध, सो पुनि फेन मर् यो ॥ ४ ॥

बिप्र अजामिल अरु सुरपति तें कहा जो नहिं बिगर् यो।
उनको कियो सहाय बहुत, उरको संताप हर् यो ॥ ५ ॥

गनिका अरु कंदरपतें जगमहँ अघ न करत उबर् यो।
तिनको चरित पवित्र जानि हरि निज हृदि-भवन धर् यो ॥ ६ ॥

केहि आचरन भलो मानैं प्रभु सो तौ न जानि पर् यो।
तुलसिदास रघुनाथ-कृपाको जोवत पंथ खर् यो ॥ ७ ॥

२४०

सोइ सुकृती,सुचि साँचो जाहि राम! तुम रीझे।
गनिका,गीध,बधिक हरिपुर गये, लै कासी प्रयाग कब सीझे ॥ १ ॥

कबहुँ न डग्यो निगम-मगतें पग, नृग जग जानि जिते दुख पाये।
गजधौं कौन दिछित, जाके सुमिरत लै सनाभ बाहन तजि धाये ॥ २ ॥

सुर-मुनि-बिप्र बिहाय बड़े कुल, गोकुल जनम गोपगृह लीन्हो।
बायों दियो बिभव कुरुपतिको, भोजन जाइ बिदुर-घर कीन्हो ॥ ३ ॥

मानत भलहि भलो भगतनितें, कछुक रीति पारथहि जनाई।
तुलसी सहज सनेह राम बस, और सबै जलकी चिकनाई ॥ ४ ॥

२४१

तव तुम मोहूसे सठनिको हठि गति न देते।
कैसेहु नाम लेइ कोउ पामर, सुनि सादर आगे ह्वै लेते ॥ १ ॥

पाप-खानि जिय जानि अजामिल जमगन तमकि तये ताको भे ते।
लियो छुडाइ, चले कर मींजत, पीसत दाँत गये रिस-रेते ॥ २ ॥

गौतम-तिय,गज,गीध,बिटप,कपि, हैं नाथहिं नीके मालुम जेते।
तिन्ह तिन्ह काजनि
———— साधु-समाजु तजि कृपासिंधु तब तब उठिगे ते ॥ ३ ॥

तिन्ह के काज
अजहुँ अधिक आदर येहि द्वारे, पतित पुनीत होत नहिं केते।
मेरे पासंगहु न पूहिहैं,ह्वै गये,है, होने खल जेते ॥ ४ ॥

हौं अबलौं करतूति तिहारिय चितवत हुतो न रावरे चेते।
अब तुलसी पूतरो बाँधिहै, सहि न जात मोपै परिहास एते ॥ ५ ॥

२४२

तुम सम दींनबंधु,न दीन कोउ मो सम, सुनहु नृपति रघुराई।
मोसम कुटिल-मौलिमन नहिं जग, तुमसम हरि,!न हरन कुटिलाई ॥ १ ॥

हौं मन-बचन-कर्म पातक-रत, तुम कृपालु पतितन-गतिदाई।
हौं अनाथ, प्रभु! तुम अनाथ-हित, चित यहि सुरति कबहुँ नहिं जाई ॥ २ ॥

हौं आरत,आरति-नासक तुम, कीरति निगम पुराननि गाई।
हौं सभीत तुम हरन सकल भय, कारन कवन कृपा बिसराई ॥ ३ ॥

तुम सुखधाम राम श्रम-भंजन, हौं अति दुखित त्रिबिध श्रम पाई।
यह जिय जानि दास तुलसी कहँ राखहु सरन समुझि प्रभुताई ॥ ४ ॥

२४३

यहै जानि चरनन्हि चित लायो।
नाहिन नाथ! अकारनको हितु तुम समान पुरान-श्रुति गायो ॥ १ ॥

जननि जनक,सुत-दार, बंधुजन भये बहुत जहँ जहँ हौं जायो।
सब स्वारथहित प्रीति, कपट चित,काहू नहिं हरिभजन सिखायो ॥ २ ॥

सुर-मुनि,मनुज-दनुज,अहि-किन्नर, मैं तनु धरि सिर काहि न नायो।
जरत फिरत त्रयताप पापबस, काहु न हरि! करि कृपा जुड़ायो ॥ ३ ॥

जतन अनेक किये सुख-कारन, हरिपद-बिमुख सदा दुख पायो।
अब थाक्यो जलहीन नाव ज्यों देखत बिपति-जाल जग छायो ॥ ४ ॥

मो कहँ नाथ! बूझिये, यह गति सुख-निधान निज पति बिसरायो।
अब तजि रौष करहु करुना हरि! तुलसिदास सरनागत आयो ॥ ५ ॥

२४४

याहि ते मैं हरि ग्यान गँवायो।
परिहरि हृदय-कमल रघुनाथहि, बाहर फिरत बिकल भयो धायो ॥ १ ॥

ज्यों कुरंग निज अंग रुचिर मद अति मतिहीन मरम नहिं पायो।
खोजत गिरि,तरु,लता,भूमि, बिल परम सुगंध कहाँ तें आयो ॥ २ ॥

ज्यों सर बिमल बारि परिपूरन, ऊपर कछु सिवार तृन छायो।
जारत हियो ताहि तजि हौं सठ, चाहत यहि बिधि तृषा बुझायो ॥ ३ ॥

ब्यापत त्रिबिध ताप तनु दारुन, तापर दुसह दरिद्र सतायो।
अपनेहि धाम नाम-सुरतरु तजि बिषय-बबूर-बाग मन लायो ॥ ४ ॥

तुम-सम ग्यान-निधान, मोहि सम मूढ़ न आन पुराननि गायो।
तुलसिदास प्रभु! यह बिचारि जिय कीजै नाथ उचित मन भायो ॥ ५ ॥

२४५

मोहि मूढ़ मन बहुत बिगोयो।
याके लिये सुनहु करुनामय, मैं जग जनमि-जनमि दुख रोयो ॥ १ ॥

सीतल मधुर पियूष सहज सुख निकटहि रहत दूरि जन खोयो।

बहु भाँतिन स्रम करत मोहबस, बृथहि मंदमति बारि बिलोयो ॥ २ ॥

करम-कीच जिय जानि,सानि चित, चाहत कुटिल मलहि मल धोयो।
तृषावंत सुरसरि बिहाय सठ फिरि-फिरि बिकल अकास निचोयो ॥ ३ ॥

तुलसिदास प्रभु! कृपा करहु अब, मैं निज दोष कछू नहिं गोयो।
डासत ही गइ बीति निसा सब, कबहुँ न नाथ! नींद भरि सोयो ॥ ४ ॥

२४६

लोक-बेद हूँ बिदित बात सुनि-समुझि।
मोह-मोहित बिकल मति थिति न लहति।
छोटे-बड़े,खोटे-खरे, मोटेऊ दूबरे,
राम! रावरे निबाहे सबहीकी निबहति ॥ १ ॥

होती जो आपने बस, रहती एक ही रस,
दूनी न हरष-सोक-सांसति सहति।
चहतो जो जोई जोई, लहतो सो सोई सोई,
केहू भाँति काहूकी न लालसा रहति। ॥ २ ॥

करम,काल, सुभाउ गुन-दोष जीव जग मायाते,
सो सभै भौंह चकित चहति।
ईसन-दिगीसनि, जोगीसनि,मुनीसनि हू,
छोड़ति छोड़ाये तें,गहाये तें गहति ॥ ३ ॥

सतरंजको सो राज, काठको सबै समाज,
महाराज बाजी रची, प्रथम न हति।
तुलसी प्रभुके हाथ हारिबो-जीतिबो नाथ!
बहु बेष, बहु मुख सारदा कहति ॥ ४ ॥

२४७

राम जपु जीह! जानि, प्रीति सों प्रतीत मानि,
रामनाम जपे जैहै जियकी जरनि।
रामनामसों रहनि, रामनामकी कहनि,
कुटिल कलि-मल-सोक-संकट-हरनि ॥ १ ॥

रामनामको प्रभाउ पूजियत गनराउ,
कियो न दुराउ, कही आपनी करनि।

भव-सागरको सेतु, कासीहू सुगति हेतु,
जपत सादर संभु सहित घरनि ॥ २ ॥

बालमीकि ब्याध हे अगाध-अपराध-निधि,
'मरा' 'मरा' जपे पूजे मुनि अमरनि।
रोक्यो बिंध्य, सोख्यो सिंधु घटजहुँ नाम-बल,
हार् यो हिय,खारो भयो भूसुर-डरनि ॥ ३ ॥

नाम-महिमा अपार, सेष-सुक बार बार,
मति-अनुसार बुध बेदहू बरनि।
नामरति-कामधेनु तुलसीको कामतरु,
रामनाम है बिमोह-तिमिर-तरनि ॥ ४ ॥

२४८

पाहि,पाहि राम! पाहि रामभद्र, रामचंद्र!
सुजस स्रवन सुनि आयो हौं सरन।
दीनबंधु! दीनता-दरिद्र-दाह-दोष-दुख,
दारुन दुसह दर-दुरित-हरन ॥ १ ॥

जब जब जग-जाल ब्याकुल करम काल,
सब खल भूप भये भूतल-भरन।
तब तब तनु धरि, भूमि-भार दूरि करि,
थापे मुनि,सुर,साधु, आस्रम, बरन ॥ २ ॥

बेद,लोक,सब साखी, काहूकी रती न राखी,
रावनकी बंदि लागे अमर मरन।
ओक दै बिसोक किये लोकपति लोकनाथ,
रामराज भयो धरम चारिहु चरन ॥ ३ ॥

सिला,गुह,गीध,कपि,भील,भालु,रातिचर,
ख्याल ही कृपालु कीन्हे तारन-तरन।
पील-उद्धरन! सीलसिंधु! ढील देखियतु,
तुलसी पै चाहत गलानि ही गरन ॥ ४ ॥

२४९

भली भाँति पहिचाने-जाने साहिब जहाँ लौं जग,

जूड़े होत थोरे, थोरे ही गरम।
प्रीति न प्रवीन,नीतिहीन,रीतिके मलीन,
मायाधीन सब किये कालहू करम ॥ १ ॥

दानव-दनुज बड़े महामूढ़ मूँड चढ़े,
जीते लोकनाथ नाथ! बलनि भरम।
रीझि-रीझि दिये बर, खीझी-खीझि घाले घर,
आपने निवाजेकी न काहूको सरम ॥ २ ॥

सेवा-सावधान तू सुजान समरथ साँचो,
सदगुन-धाम राम! पावन परम।
सुरुख,सुमुख,एकरस,एकरूप,तोहि,
बिदित बिसेषि घटघटके मरम ॥ ३ ॥

तोसो नतपाल न कृपाल,न कँगाल मो-सो,
दयामें बसत देव सकल धरम।
राम कामतरु-छाँह चाहै रुचि मन माँह,
तुलसी बिकल,बलि, कलि-कुधरम ॥ ४ ॥

२५०

तौं हौं बार बार प्रभुहि पुकारिकै खिझावतो न,
जो पै मोको होतो कहूँ ठाकुर-ठहरु।
आलसी-अभागे मोसे तैं कृपालु पाले-पोसे,
राजा मेरे राजाराम,अवध सहरु ॥ १ ॥

सेये न दिगीस,न दिनेस,न गनेस, गौरी,
हित कै न माने बिधि हरिउ न हरु।
रामनाम ही सों जोग-छेम, नेम, प्रेम-पन,
सुधा सो भरोसो एहु,दूसरो जहरु ॥ २ ॥

समाचार साथके अनाथ-नाथ! कासों कहौं,
नाथ ही के हाथ सब चोरऊ पहरु।
निज काज, सुरकाज,आरतके काज,राज!
बूझिये बिलंब कहा कहूँ न गहरु ॥ ३ ॥

रीति सुनि रावरी प्रतीति-प्रीति रावरे सों,

डरत हौं देखि कलिकालको कहरु।
कहेही बनैगी कै कहाये,बलि जाउँ,राम,
'तुलसी! तू मेरो, हारि हिये न हहरु' ॥ ४ ॥

२५१

राम! रावरो सुभाउ, गुन सील महिमा प्रभाउ,
जान्यो हर,हनुमान,लखन,भरत।
जिन्हके हिये-सुथरु राम-प्रेम-सुरतरु,
लसत सरस सुख फूलत फरत ॥ १ ॥

आप माने स्वामी कै सखा सुभाइ भाइ,पति,
ते सनेह-सावधान रहत डरत।
साहिब-सेवक-रीति, प्रीति-परिमिति,नीति,
नेमको निबाह एक टेक न टरत ॥ २ ॥

सुक-सनकादिक, प्रहलाद-नारदादि कहैं,
रामकी भगति बड़ी बिरति-निरत।
जाने बिनु भगति न, जानिबो तिहारे हाथ,
समुझी सयाने नाथ! पगनि परत ॥ ३ ॥

छ-मत बिमत, न पुरान मत,एक मत,
नेति-नेति-नेति नित निगम करत।
औरनिकी कहा चली ? एकै बात भलै भली,
राम-नाम लिये तुलसी हू से तरत ॥ ४ ॥

२५२

बाप! आपने करत मेरी घनी घटि गई।
लालची लबारकी सुधारिये बारक,बलि,
रावरी भलाई सबहीकी भली भई ॥ १ ॥

रोगबस तनु, कुमनोरथ मलिन मनु,
पर-अपबाद मिथ्या-बाद बानी हई।
साधनकी ऐसी बिधि, साधन बिना न सिधि,
बिगरी बनावै कृपानिधिकी कृपा नई ॥ २ ॥

पतित-पावन, हित आरत-अनाथनिको,

निराधारको अधार,दीनबंधु,दई।
इन्हमें न एकौ भयो, बूझि न जूझ्यो न जयो,
ताहिते त्रिताप-तयो, लुनियत बई ॥ ३ ॥

स्वाँग सूधो साधुको, कुचालि कलितें अधिक,
परलोक फीकी मति, लोक-रंग-रई।
बड़े कुसमाज राज! आजुलौं जो पाये दिन,
महाराज! केहू भाँति नाम-ओट लईः ॥ ४ ॥

राम! नामको प्रताप जानियत नीके आप,
मोको गति दूसरी न बिधि निरमई।
खीझिबे लायक करतब कोटि कोटि कटु,
रीझिबे लायक तुलसीकी निलजई ॥ ५ ॥

२५३

राम राखिये सरन, राखि आये सब दिन।
बिदित त्रिलोक तिहुँ काल न दयाल दूजो,
आरत-प्रनत-पाल को है प्रभु बिन ॥ १ ॥

लाले पाले,पोषे तोषे आलसी-अभागी-अघी,
नाथ! पै अनाथनिसों भये न उरिन।
स्वामी समरथ ऐसो, हौं तिहारो जै सो. तैसो,
काल-चाल हेरि होति हिये घनी घिन ॥ २ ॥

खीझि-रीझि,बिहँसि-अनख, क्यों हूँ एक बार,
'तुलसी तू मेरो' बलि, कहियत किन?
जाहिं सूल निरमूल, होहिं सुख अनुकूल,
महाराज राम! रावरी सौं, तेहि छिन ॥ ३ ॥

२५४

राम! रावरो नाम मेरो मातु-पितु है।
सुजन-सनेही, गुरु-साहिब, सखा-सुहृद्,
राम-नाम प्रेम-पन अबिचल बितु है ॥ १ ॥

सतकोटि चरित अपार दधिनिधि मथि,
लियो काढ़ि वामदेव नाम-घृतु है।

नामको भरो सो. बल चारिहू फलको फल,
सुमिरिये छाड़ि छल, भलो कृतु है ॥ २ ॥

स्वारथ-साधक, परमारथ-दायक नाम,
राम-नाम सारिखो न और हितु है।
तुलसी सुभाव कही, साँचिये परैगी सही,
सीतानाथ-नाम नित चितहूको चितु है ॥ ३ ॥

२५५

राम!रावरो नाम साधु-सुरतरु है।
सुमिरे त्रिबिध घाम हरत, पूरत काम,
सकल सुकृत सरसिजको सरु है ॥ १ ॥

लाभहुको लाभ, सुखहूको सुख, सरबस,
पतित-पावन, डरहूको डरु है।
नीचेहूको ऊँचेहूको, रंकहूको रावहूको,
सुलभ, सुखद आपनो-सो घरु है ॥ २ ॥

बेद हू, पुरान हू पुरारि हू पुकारि कह्यो,
नाम-प्रेम चारिफलहूको फरु है।
ऐसे राम-नाम सों न प्रीति, न प्रतीति मन,
मेरे जान, जानिबो सोई नर खरु है ॥ ३ ॥

नाम-सो न मातु-पितु, मीत-हित, बंधु-गुरु,
साहिब सुधी सुसील सुधाकरु है।
नामसों निबाह नेहु, दीनको दयालु! देहु,
दासतुलसीको, बलि, बड़ो बरु है ॥ ४ ॥

२५६

कहे बिनु रह्यो न परत,कहे राम! रस न रहत।
तुमसे सुसाहिबकी ओट जन खौटो-खरो,
कालकी, करमकी कुसाँसति सहत ॥ १ ॥

करत बिचार सार पैयत न कहूँ कछु,
सकल बड़ाई सब कहाँ ते लहत ?
नाथकी महिमा सुनि, समुझि आपनि ओर,

हेरि हारि कै हहरि हृदय दहत ॥ २ ॥

सखा न, सुसेवक न, सुतिय न, प्रभु आप,
माय-बाप तुही साँचो तुलसी कहत।
मेरी तौ थोरी है, सुधरैगी बिगरियौ,बलि,
राम! रावरी सों, रही रावरी चहत ॥ ३ ॥

२५७

दीनबंधु! दूरि किये दीनको न दूसरी सरन।
आपको भले हैं सब, आपनेको कोऊ कहूँ,
सबको भलो है राम! रावरो चरन ॥ १ ॥

पाहन,पसु,पतंग,कोल,भील,निसिचर,
काँच ते कृपानिधान किये सुबरन।
दंडक-पुहुमि पाय परसि पुनीत भई,
उकठे बिटप लागे फूलन-फरन ॥ २ ॥

पतित-पावन नाम बाम हू दाहिनो, देव!
दुनी न दुसह-दुख-दूषन-दरन।
सीलसिंधु! तोसों ऊँची-नीचियौ कहत सोभा,
तोसो तुही तुलसीको आरति-हरन ॥ ३ ॥

२५८

जानि पहिचानि मैं बिसारे हौं कृपानिधान!
एतो मान ढीठ हौं उलटि देत खौरि हौं।
करत जतन जासों जोरिबे को जोगीजन,
तासों क्योंहू जुरी, सो अभागो बैठो तोरि हौं ॥ १ ॥

मोसो दोस-कोसको भुवन-कोस दूसरो न,
आपनी समुझि सूझि आयो टकटोरि हौं।
गाड़ीके स्वानकी नाईं,माया मोहकी बड़ाई,
छिनहिं तजत, छिन भजत बहोरि हौं ॥ २ ॥

बड़ो साईं-द्रोही न बराबरी मेरीको कोऊ,
नाथकी सपथ किये कहत करोरि हौं।
दूरि कीजै द्वारतें लबार लालची प्रपंची,

सुधा-सो सलिल सूकरी ज्यों गहडोरिहौं ॥ ३ ॥

राखिये नीके सुधारि, नीचको डारिये मारि,
दुहूँ ओरकी बिचारि, अब न निहोरिहौं।
तुलसी कही है साँची रेख बार बार खाँची,
ढील किये नाम-महिमाकी नाव बोरिहौं ॥ ४ ॥

२५९

रावरी सुधारी जो बिगारी बिगरैगी मेरी,।
कहौं,बलि,बेदकी न लोक कहा कहैगो ?
प्रभुको उदास-भाउ, जनको पाप-प्रभाउ,
दुहूँ भाँति दीनबन्धु ! दीन दुख दहैगो ॥ १ ॥

मैं तो दियो छाती पबि,लयो कलिकाल दबि,
साँसति सहत,परबस को न सहैगो ?
बाँकी बिरुदावली बनैगी पाले ही कृपालु !
अंत मेरो हाल हेरि यौं न मन रहैगो ॥ २ ॥

करमी-धरमी, साधु-सेवक, बिरत-रत,
आपनी भलाई थल कहाँ कौन लहैगो ?
तेरे मुँह फेरे मोसे कायर-कपूत-कूर,
लटे लटपटेनि को कौन परिगहैगो ? ॥ ३ ॥

काल पाय फिरत दसा दयालु ! सबहीकी,
तोहि बिनु मोहि कबहूँ न कोऊ चहैगो।
बचन-करम-हिये कहौं राम ! सौंह किये,
तुलसी पै नाथके निबाहेई निबहैगो ॥ ४ ॥

२६०

साहिब उदास भये दास खास खीस होत,
मेरी कहा चली ? हौं बजाय जाय रह्यो हौं।
लोकमें न ठाउँ, परलोकको भरोसो कौन ?
हौं तो, बलि जाउँ,रामनाम ही ते लह्यो हौं ॥ १ ॥

करम,सुभाउ,काम,कोह,लोभ,मोह,-
ग्राह अति गहनि गरीबी गाढ़े गह्यो हौं।

छोरिबेको महाराज,बाँधिबेको कोटि भट,
पाहि प्रभु !पाहि, तिहुँ ताप-पाप दह्यो हौं ॥ २ ॥

रीझि-बूझि सबकी प्रतीति-प्रीति एही द्वार,
दूधको जर् यो पियत फूँकि फूँकि मह्यो हौं।
रटत-रटत लट्यो,जाति-पाँति-भाँति घट्यो,
जूठनिको लालची चहौं न दूध-नह्यो हौं ॥ ३ ॥

अनत चह्यो न भलो,सुपथ सुचाल चल्यो,
नीके जिय जानि इहाँ भलो अनचह्यो हौं।
तुलसी समुझि समुझायो मन बार बार,
अपनो सो नाथ हू सों कहि निरबह्यो हौं ॥ ४ ॥

२६१

मेरी न बनै बनाये मेरे कोटि कलप लौं,
राम !रावरे बनाये बनै पल पाउ मैं।
निपट सयाने हौ कृपानिधान ! कहा कहौं ?
लिये बेर बदलि अमोल मनि आउ मैं ॥ १ ॥

मानस मलीन,करतब कलिमल पीन,
जीह हू न जप्यो नाम,बक्यो आउ-बाउ मैं।
कुपथ कुचाल चल्यो, भयो न भूलिहू भलो,
बाल-दसा हू न खेल्यो खेलत सुदाउ मैं ॥ २ ॥

देखा-देखी दंभ तें कि संग तें भई भलाई,
प्रकटि जनाई, कियो दुरित-दुराउ मैं।
दोष
राग रोष—- पोषे, गोगन समेत मन,
द्वेष
इनकी भगति कीन्ही इनही को भाउ मैं ॥ ३ ॥

आगिली-पाछिली, अबहूँकी अनुमान ही तें,
बूझियत गति, कछु कीन्हों तो न काउ मैं।
जग कहै रामकी प्रतीति-प्रीति तुलसी हू,
झूठे-साँचे आसरो साहब रघुराउ मैं ॥ ४ ॥

२६२

कह्यो न परत,बिनु कहे न रह्यो परत,
बड़ो सुख कहत बड़े सों,बलि,दीनता।
प्रभुकी बड़ाई बड़ी,आपनी छोटाई छोटी,
प्रभुकी पुनीतता, आपनी पाप-पीनता ॥ १ ॥

दुहू ओर समुझि सकुचि सहमत मन,
सनमुख होत सुनि स्वामी-समीचीनता।
नाथ-गुनगाथ गाये,हाथ जोरि माथ नाये,
नीचऊ निवाजे प्रीति-रीतिकी प्रबीनता ॥ २ ॥

एही दरबार है गरब तें सरब-हानि,
लाभ जोग-छेमको गरीबी-मिसकीनता।
मोटो दसकंध सो न दूबरो बिभीषण सो,
बूझि परी रावरेकी प्रेम-पराधीनता ॥ ३ ॥

यहाँकी सयानप,अयानप सहस सम,
सूधौ सतभाय कहे मिटति मलीनता।
गीध-सिला-सबरीकी सुधि सब दिन किये,
होइगी न साई सों सनेह-हित-हीनता ॥ ४ ॥

सकल कामना देत नाम तेरो कामतरु,
सुमिरत होत कलिमल-छल-छीनता।
करुनानिधान ! बरदान तुलसी चहत,
सीतापति-भक्ति-सुरसरि-नीर-मीनता ॥ ५ ॥

२६३

नाथ नीके कै जानिबी ठीक जन-जीयकी।
रावरो भरोसो नाह कै सु-प्रेम-नेम लियो,
रुचिर रहनि रुचि मति गति तीयकी ॥ १ ॥

कुकृत-सुकृत बस सब ही सों संग पर् यो,
परखी पराई गति, आपने हूँ कीयकी।
मेरे भलेको गोसाई ! पोचको,न सोच-संक,
हौंहुँ किये कहौं सौंह साँची सीय-पीयकी ॥ २ ॥

ग्यानहू-गिराके स्वामी,बाहर-अंतरजामी,
यहाँ क्यों दुरैगी बात मुखकी औ हीयकी ?
तुलसी तिहारो,तुमहीं पै तुलसीके हित,
राखि कहौं हौं तो जो पै व्हहौ माखी घीयकी ॥ ३ ॥

२६४

मेरो कह्यो सुनि पुनि भावै तोहि करि सो।
चारिहू बिलोचन बिलोकु तू तिलोक महँ,
तेरो तिहु काल कहु को है हितू हरि-सो ॥ १ ॥

नये-नये नेह अनुभये देह-गेह बसि,
परखे प्रंपंची प्रेम, परत उघरि सो।
सुहृद-समाज दगाबाजिहीको सौदा-सूत,
जब जाको काज तब मिलै पाँय परि सो ॥ २ ॥

बिबुध सयाने, पहिचाने कैधौं नाहीं नीके,
देत एक गुन, लेत कोटि गुन भरि सो।
करम-धरम श्रम-फल रघुबर बिनु,
राखको सो होम है, ऊसर कैसो बरिसो ॥ ३ ॥

आदि-अंत-बीच भलो भलो करै सबहीको,
जाको जस लोक-बेद रह्यो है बगरि-सो।
सीतापति सारिखो न साहिब सील-निधान,
कैसे कल परै सठ! बैठो सो बिसरि-सो ॥ ४ ॥

जीवको जीवन-प्रान, प्रानको परम हित,
प्रीतम,पुनीतकृत नीचन निदरि सो।
तुलसी! तोको कृपालु जो कियो कोसलपालु,
चित्रकूटको चरित्र चेतु चित करि सो ॥ ५ ॥

२६५

तन सुचि,मनरुचि, मुख कहौं 'जन हौं सिय-पीको'।
केहि अभाग जान्यो नहिं, जो न होइ नाथ सों नातो-नेह न नीको ॥ १ ॥

जल चाहत पावक लहौं, बिष होत अमीको।
कलि-कुचाल संतनि कही सोइ सही, मोहि कछु फहम न तरनि तमीको ॥ २ ॥

जानि अंध अंजन कहै बन-बाघिनी-घीको।
सुनि उपचार बिकारको सुबिचार करौं जब, तब बुधि बल हरै हीको ॥ ३ ॥

प्रभु सों कहत सकुचात हौं, परौं जनि फिरि फीको।
निकट बोलि,बलि,बरजिये,परिहरै ख्याल अब तुलसिदास जड़ जीको ॥ ४ ॥

२६६

ज्यों ज्यों निकट भयो चहौं कृपालु! त्यों त्यों दूरि पर् यो हौं।
तुम चहुँ जुग रस एक राम! हौं हूँ रावरो, जदपि अघ अवगुननि भर् यो हौं ॥
बीच पाइ एहि नीच बीच ही छरनि छर् यो हौं।
हौं सुबरन कुबरन कियो, नृपतें भिखारि करि, सुमतितें कुमति कर् यो हौं ॥ २ ॥

अगनित गिरि-कानन फिरयो, बिनु आगि जर् यो हौं।
चित्रकूट गये हौं लखि कलिकी कुचालि सब, अब अपडरनि डर् यो हौं ॥ ३ ॥

माथ नाइ नाथ सों कहौं, हात जोरि खर् यो हौं।
चीन्हों चोर जिय मारिहै तुलसी सो कथा सुनि प्रभुसों गुदरि निबर् यो हौं ॥ ४ ॥

२६७

पन करि हौं हठि आजुतें रामद्वार पर् यो हौं।
'तू मेरो' यह बिन कहे उठिहौ न जनमभरि, प्रभुकी सौकरि निर् यो हौं ॥ १ ॥

दै दै धक्का जमभट थके, टारे न टर् यो हौं।
उदर दुसह साँसति सही बहुबार जनमि जग, नरकनिदरि निकर् यो हौं ॥ २ ॥

हौं मचला लै छाड़िहौं, जेहि लागि अर् यो हौं।
तुम दयालु,बनिहै दिये,बलि,बिलँब न कीजिये, जात गलानि गर् यौ हौं ॥ ३ ॥

प्रगट कहत जो सकुचिये, अपराध-भर् यो हौं।
तौ मनमें अपनाइये, तुलसीहि कृपा करि, कलि बिलोकि हहर् यो हौं ॥ ४ ॥

२६८

तुम अपनायो तब जानिहौं,जब मन फिरि परिहै।
जेहि सुभाव बिषयनि लग्यो, तेहि सहज नाथ सौं नेह छाड़ि छल करिहै ॥ १ ॥

सुतकी प्रीति,प्रतीति मीतकी, नृप ज्यों डर डरिहै।
अपनो सो स्वारथ स्वामिसों, चहुँ बिधि चातक ज्यों एक टेकते नहिं टरिहै ॥ २ ॥

हरषिहै न अति आदरे, निदरे न जरि मरिहै।
हानि-लाभ दुख-सुख सबै समचित हित-अनहित,कलि-कुचालि परिहरिहै ॥ ३ ॥

प्रभु-गुन सुनि मन हरषिहै, नीर नयननि ढरिहै।
तुलसिदास भयो रामको बिस्वास,प्रेम लखि आनँद उमगि उर भरिहै ॥ ४ ॥

२६९

राम कबहुँ प्रिय लागिहौ जैसे नीर मीनको?
सुख जीवन ज्यों जीवको, मनि ज्यों फनिको हित, ज्यों धन लोभ-लीनको ॥ १ ॥

ज्यों सुभाय प्रिय लगति नागरी नागर नवीनको।
त्यों मेरे मन लालसा करिये करुनाकर! पावन प्रेम पीनको ॥ २ ॥

मनसाको दाता कहैं श्रुति प्रभु प्रबीनको।
तुलसिदासको भावतो,बलि जाउँ दयानिधि! दीजे दान दीनको ॥ ३ ॥

२७०

कबहुँ कृपा करि रघुबीर! मोहू चितैहो।
भलो-बुरो जन आपनो,जिय जानि दयानिधि! अवगुन अमित बितैहो ॥ १ ॥

जनम जनम हौं मन जित्यो, अब मोहि जितैहो।
हौं सनाथ ह्वैहौ सही,तुमहू अनाथपति, जो लघुतहि न भितैहो ॥ २ ॥

बिनय करौं अपभयहु तें, तुम्ह परम हितै हो।
तुलसिदास कासों कहै, तुमही सब मेरे,प्रभु-गुरु,मातु-पितै हो ॥ ३ ॥

२७१

जैसो हौं तैसो राम रावरो जन, जनि परिहरिये।
कृपासिंधु,कोसलधनी! सरनागत-पालक, ढरनि आपनी ढरिये ॥ १ ॥

हौं तौ बिगरायल और को, बिगरो न बिगरिये।
तुम सुधारि आये सदा सबकी सबही बिधि, अब मेरियो सुधरिये ॥ २ ॥

जग हँसिहै मेरे संग्रहे, कत इहि डर डरिये।
कपि-केवट कीन्हे सखा जेहि सील,सरल चित, तेहि सुभाउ अनुसरिये ॥ ३ ॥

अपराधी तउ आपनो, तुलसी न बिसरिये।
टूटियो बाँह गरे परै, फूटेहु बिलोचन पीर होत हित करिये ॥ ४ ॥

२७२

तुम जनि मन मैलो करो, लोचन जनि फेरो।
सुनहु राम! बिनु रावरे लोकहु परलोकहु कोउ न कहूँ हितु मेरो ॥ १ ॥

अधम
अगुन-अलायक-आलसी जानि——-अनेरो।
अधनु
स्वारथके साथिन्ह तज्यो तिजराको- सो टोटक,औचट उलटि न हेरो ॥ २ ॥

भगतिहीन, बेद-बाहिरो लखि कलिमल घेरो।
देवनिहू देव! परिहरयो, अन्याव नतिनको हौं अपराधीसब केरो ॥ ३ ॥

नामकी ओट पेट भरत हौं, पै कहावत चेरो।
जगत-बिदित बात ह्वै परी, समुझिये धौं अपने, लोक कि बेद बड़ेरो ॥ ४ ॥

ह्वैहै जब-जब तुमहिं तें तुलसीको भलेरो।
देव
दिन-हू-दिन—-बिगरि है,बलि जाउँ, बिलंब किये,अपनाइये सबेरो ॥ ५ ॥

दीन

२७३

तुम तजि हौं कासों कहौं, और को हितु मेरे ?
दीनबंधु!सेवक,सखा,आरत,अनाथपर सहज छोह केहि केरे ॥ १ ॥

बहुत पतित भवनिधि तरे बिनु तरि बिनु बेरे।
कृपा-कोप-सतिभायहू, धोखेहु-तिरछेहू,राम! तिहारेहि हेरे ॥ २ ॥

जो चितवनि सौंधी लगै, चितइये सबेरे।
तुलसिदास अपनाइये, कीजै न ढील, अब जिवन-अवधि अति नेरे ॥ ३ ॥

२७४

जाउँ कहाँ, ठौर है कहाँ देव! दुखित-दीनको ?
को कृपालु स्वामी-सारिखो, राखे सरनागत सब अँग बल-बिहीनको ॥ १ ॥

गनिहि,गुनिहि साहिब लहै, सेवा समीचीनको।
अधम
—-अगुन आलसिनको पालिबो फबि आयो रघुनायक नवीनको ॥ २ ॥

अधन

मुखकै कहा कहौं, बिदित है जीकी प्रभु प्रबीनको।
तिहू काल, तिहु लोकमें एक टेक रावरी तुलसीसे मन मलीनको ॥ ३ ॥

२७५

द्वार द्वार दीनता कही, काढि रद, परि पाहूँ।
हैं दयालु दुनी दस दिसा,दुख-दोष-दलन-छम, कियो न सँभाषन काहूँ ॥ १ ॥

जन्यो

तनु——-कुटिल कीट ज्यों, तज्यों मातु-पिताहूँ।

जनतेऊ

काहेको रोष,दोष काहि धौं,मेरे ही अभाग मोसों सकुचत छुइ सब छाहूँ ॥ २ ॥

दुखित देखि संतन कह्यो, सोचै जनि मन माँहू।
तोसे पसु-पाँवर-पातकी परिहरे न सरन गये, रघुबर ओर बिनाहूँ ॥ ३ ॥

तुलसी तिहारो भये भयो सुखी प्रीती-प्रतीति बिनाहू।
नामकी महिमा,सील नाथको, मेरो भलो बिलोकि अब तें सकुचाहुँ,सिहाहूँ ॥ ४ ॥

२७६

कहा न कियो,कहाँ न गयो, सीस काहि न नायो ?
राम रावरे बिन भये जन जनमि-जनमि जग दुख दसहू दिसि पायो ॥ १ ॥

आस-बिबस खास दास ह्वै नीच प्रभुनि जनायो।
हा हा करि दीनता कही द्वार-द्वार बार-बार, परी न छार,मुह बायो ॥ २ ॥

असन-बसन बिनु बावरो जहँ-तहँ उठि धायो।

मान

महिमा——प्रिय प्रानते तजि खोलि खलनि आगे, खिनु-खिनु पेट खलायो ॥ ३ ॥

असु

नाथ! हाथ कछु नाहि लग्यो, लालच ललचायो।
साँच कहौं,नाच कौन सो जो, न मोहि लोभ लघु हौं निरलज्ज नचायो ॥ ४ ॥

मन

श्रवन-नयन-मग——लगे, सब थल पतियायो।

अग

मूड मारि,हिय हारिकै, हित हेरि हहरि अब चरन-सरन तकि आयो ॥ ५ ॥

दसरथके! समरथ तुहीं, त्रिभुवन जसु गायो।
तुलसि नमत अवलोकिये,बाँह-बोल बलि दै बिरुदावली बुलायो ॥ ६ ॥

२७७

राम राय! बिनु रावरे मेरे को हितु साँचो ?
स्वामी-सहित सबसों कहौं,सुनि-गुनि बिसेषि कोउ रेख दूसरी खाँचो ॥ १ ॥

देह-जीव-जोगके सखा मृषा टाँचन टाँचो।
किये बिचार सार कदलि ज्यों, मनि कनकसंग लघु लसत बीच बिच काँचो।२।

'बिनय-पत्रिका' दीनकी,बापु! आपु ही बाँचो।
हिये हेरि तुलसी लिखी,सो सुभाय सही करि बहुरि पूँछिये पाँचो ॥ ३ ॥

२७८

पवन-सुवन! रिपु-दवन! भरतलाल! लखन! दीनकी।
निज निज अवसर सुधि किये,बलि जाउँ, दास-आस पूजि है खासखीनकी ॥ १ ॥

राज-द्वार भली सब कहैं साधु-समीचीनकी।
सुकृत-सुजस,साहिब-कृपा,स्वारथ-परमारथ,गति भये गति-बिहीनकी ॥ २ ॥

समय सँभारि सुधारिबी तुलसी मलीनकी।
प्रीति-रीति समुझाइबी नतपाल कृपालुहि परमिति पराधीनकी।३ ॥

२७९

मारुति-मन,रुचि भरतकी लखि लषन कही है।
कलिकालहु नाथ!नाम सों परतीति-प्रीति एक किंकरकी निबही है ॥ १ ॥

सकल सभा सुनि लै उठी, जानी रीति रही है।
कृपा गरीब निवाजकी,देखत गरीबको साहब बाँह गही है ॥ २ ॥

बिहँसि राम कह्यो 'सत्यहै,सुधि मैं हूँ लही है'।
रघुनाथ
मुदित माथ नावत, बनी तुलसी अनाथकी,परी———सही है ॥ ३ ॥

रघुनाथ हाथ
॥ श्रीसीतारामार्पणमस्तु ॥

॥ इतिश्री ॥

gosvaamii tulasiidaasa kRita vinayapatrikaa

pdf was typeset on December 17, 2022

Please send corrections to *sanskrit@cheerful.com*